शौकत थानवी

घर जमाई

घर जमाई

"उत्तर प्रदेश शासन, शिक्षा विभाग
(पुस्तकालय प्रकोष्ठ) से अनुदान स्वरूप प्राप्त"

शौकत थानवी

दिनमान प्रकाशन

३०१४, चर्खेवालान, दिल्ली-६

अभिमत

श्री शौकत थानवी उर्दू के जाने-माने हास्यकार हैं। आपकी कितनी ही अनूठी कृतियाँ हिन्दी में स्थान पा चुकी हैं। 'घर जमाई' भी आपकी एक ऐसी ही हास्य-कृति है, जो पाठकों का भरपूर मनोरंजन कर पायेगी।

—प्रकाशक

एक

आपसे मिलिए—आप मलिक साहब हैं, जिनके घर में आजकल बन्दा ठहरा हुआ है।

हमने जो कहीं और घर ढूंढ़ने का जिक्र किया तो बोले—'भई, अब तुमने घर का नाम लिया तो मुझसे बुरा कोई न होगा।'

और हमने देखा कि सचमुच मलिक साहब का मूड बिगड़ गया है और वह इस वक्त हुक्का पी नहीं रहे थे बल्कि उसको खाने की कोशिश कर रहे थे। मलिक साहब को जब कभी गुस्सा आता या सदमा होता या मूड बिगड़ता तो उस समय शामत हुक्के की आया करती थी जिसको मुंह में दबाकर वह कुछ इस किस्म के ताबड़-तोड़ कश लगाते थे कि सारे कमरे में धुआं-ही-धुआं नजर आता था, मानो अभी बम गिरा हो।

खैर, इस समय तो उनका यह गुस्सा ठीक ही था, क्योंकि उनका वह घर, जिसका एक सजा-सजाया हुआ कमरा हमारे कब्जे में था, मौजूद है और हम मरे जा रहे हैं किसी और घर के लिए।

इस कमरे में सभी कुछ तो था—ईरानी कालीन का फ़र्श, दरवाजों और खिड़कियों पर सुन्दर रेशमी पर्दे, आल्मारियों में चुनी हुई किताबें, एक कोने में लिखने की मेज, चारों तरफ क़ीमती सोफे, एक तरफ गुदगुदे बिस्तर वाली चमकदार मसहरी। सिरहाने एक छोटी-सी मेज पर रखा हुआ रेडियो-सेट, एक मेज पर टेबिल लैम्प। इसी कमरे से मिला हुआ छोटा-सा खूबसूरत कपड़े बदलने का कमरा जिसमें एक छोड़ दो कपड़े टांगने की आल्मारियाँ और इस छोटे-से कमरे से मिला हुआ बाथरूम।

यह तो हुआ वह सेट जो हमारे कब्जे में है, लेकिन इसके अलावा मुफ्त के नौकर और खातिरदारी ऐसी कि अपने ऊपर बीमार होने का शक होने लगा। बिस्तर की चाय से लेकर रात के खाने तक छोटी-से-छोटी और बड़ी-से-बड़ी हर बात की ताक स्वयं मलिक साहब को रहा करती थी। सारांश यह कि आराम ऐसा था कि महसूस होने लगता जैसे अपनी ससुराल में बैठे हैं।

दफ्तर जाने को तैयार हुए तो सिगरेट-केस में सिगरेट भरे हुए तैयार हैं और इस पर भी मलिक साहब को तसल्ली नहीं है। बैठे खिजाब लगा रहे हैं, मगर चीखते जाते हैं—

'अरे मियाँ माचिस ले ली है'''मैंने कहा दो-चार सिगार भी डाल लो जेब में—अबे अभागी, सिगार का बक्स लाकर दे देना।'

दफ्तर से वापस आये तो मेज़ पर नाश्ता तैयार लगा हुआ है और मलिक साहब हैं कि इन्तजार में टहल रहे हैं।

उन्हें यह भी मालूम है कि दफ्तर से आते ही हम गुसल करते हैं। इसलिए सूरत देखते ही नारा बुलन्द करेंगे—'अबे अभागी, देख गुसल तैयार है?'

इधर गुसलखाने से हम बाहर निकले उधर ताजी गर्म की हुई चाय टीकोज़ी से ढकी आ गई और अन्दर से गरमा-गरम पकवान, कभी पकौड़े, कभी नमकपारे चले आ रहे हैं। और मलिक साहब इस तरह ज़िद कर-करके ज्यादा-से-ज्यादा ठूँसा देना चाहते हैं जैसे प्यार की मारी कोई माँ अपने लाल को बदहज़मी कराने पर तुली हो।

कहेंगे—'मियाँ खाओ न! यही इस वक्त का खाया-पिया काम आएगा—जो हम खा-पी चुके हैं वही आज काम आ रहा है। तुम सारा दिन दिमाग का अर्क निकालते हो—अंग्रेजी लिखते हो सारा दिन बैठकर दफ्तर में। खाने का ख्याल न रखोगे तो करोगे क्या? लो, यह सेब खाओ काश्मीर का।'

और मैंने कहा—'यह काश्मीर का बनेगा क्या?'

'भई, काश्मीर तो अगर सच पूछो तो हमारा ही है, धाँधली की बात दूसरी है।'

मलिक साहब बातचीत मे इस तरह कही-से-कही जा पहुचते है । अब वह सेब खिलायेंगे और कश्मीर के बारे में उलझकर यह भी भुला देंगे कि चाय में चीनी पड़ चुकी है या नहीं, और जब पता चलेगा कि वह प्याली में डेढ़ के बजाय चार-पाँच चम्मच चीनी को डालकर चाय को लिपटन का मुरब्बा बना चुके हैं तो दूसरी प्याली बनाई जायेगी ।

अगर उसी वक्त अन्दर से गरमागरम पकौड़े आ गए तो सारी दुनिया की बहस का मजमून खत्म और वह एक कहकहा लगाकर पकौड़ों को बहस का मजमून बना लेंगे—'लीजिए साहब, आज हमारी गजाला ने पकौडो को मजमून बाँधा है ।'

यह गज़ाला उनकी साहबजादी हैं । नाम तो बेचारी का गज़ाला है मगर वालिद साहब कभी-कभी प्यार में उनको 'गजल' भी कह दिया करते हैं। अब पहला पकौड़ा मुँह में डालेंगे और फिर आँख बन्द करके झूमेंगे ।

'भई वाह ! मजा आ गया । मैंने ऐसे पकौड़े यह उम्र होने को आई कभी नहीं खाये···क्या बात है ! कितने खस्ता, कितने बढ़िया । मियाँ, बड़े नसीब वाले हो कि तुम्हारे लिए गज़ाला बीबी ने यह तकलीफ गवारा की है वरना इन पकौड़ों के लिए खुशामद कीजिये, बार-बार कहिये मगर तरसाती रहेंगी—वह तो कहो तुम्हारी वजह से हमको भी मिल जाते हैं । मियाँ खाकर तो देखो, यह कोई मामूली पकौडे नहीं हैं···वाह-वाह !'

अब अगर इन पकौड़ों की तारीफ न की जाये तो डर है कि कहीं मलिक साहब नाराज न हो जायें, और तारीफ की जाये तो यह ख्याल जरूर रखा जाये कि तारीफ काफी हो और ज़रा लम्बी वरना···या सबसे बडी तारीफ यह कि इन पकौड़ों को ज्यादा-से-ज्यादा खाया जाये लिहाजा जी चाहे या न चाहे मगर ठूंसे जाओ बस ।

सारांश यह कि चाय हो या खाने की बात—मलिक साहब की हाजिरी जरूरी है और चूंकि खुद माशाअल्लाह खाने में तेज हैं लिहाज़ा हमारे लिए भी यही चाहते हैं कि किराये का पेट समझकर बस ठूंसते ही चले जायें । ज़रा-सा हाथ रोका और उनकी आंखें गोल हो गईं ।

'मियाँ, यह क्या वाहियातपन है—खाते हो या सूंघते हो—अजीजे-मन इतना कम खाना इस जवानी में घुन लगा देगा । अभी तुमको पहाड़-

सी जिन्दगी बितानी है—दुनिया का मुकाबला करना है, यह खुराक रखोगे तो खाक करोगे।'

फिर कहेंगे—'अब मुझको ही देख लो—पूरे साठ वर्ष का होने को हूँ। मगर सुबह उठकर अढ़ाई सेर दूध तो एक साँस में ही पी जाता हूँ।'

और वाकई वह पी जाते होंगे। बड़ी आदमखोरों जैसी शक्ल पाई है। इस उम्र में खाने की मेज़ पर वह इस तरह झाड़ू फेरते हैं कि बस देखते ही रह जाओ। और खाने की मेज़ की क्या बात, खाने के वक्त के अलावा भी वह अक्सर शौक फरमाते रहते हैं।

एक रोज़ दफ्तर से आकर जो देखते हैं तो मलिक साहब के चारो तरफ गन्ने के छिलकों का बड़ा-सा ढेर लगा हुआ है और वह एक मोटे से गन्ने को बैठे चबा रहे हैं। हँसकर फरमाया—'आओ, जरा दाँतों की कसरत हो जाये—गाँव से गन्ने आ गये हैं।'

मालूम हुआ कि सोलहवाँ गन्ना हाथ में है।

एक दिन इसी तरह आपको आम खाते देखा था और डर लग रहा था कि अगर आम खत्म हो गये और तबीयत या पेट दोनो में से कोई न भरा तो शायद हमको ही खा जायेंगे।

मतलब कहने का यह कि खाना तो खैर खाते ही हैं मगर यह नहीं कि बस खाने ही के होकर रह जायें। मेदे को तरह-तरह से आज़माते है और पेट भी अजीब डनलप का बना हुआ मिला है, ज़रूरत के हिसाब से बढ़ता रहता है।

मलिक साहब को सिवाय खाने और फिर खाना हज़म करने के और काम ही क्या है। घर के रईस ठहरे। गाँव-गाँव कोठियाँ, हवेलियाँ, सवारी के लिए मोटर, खुदा का दिया हुआ सब कुछ है, सिवाय अक्ल के। और अगर गौर कीजिये तो इसकी कोई खास ज़रूरत भी नहीं। न उनको तिजारत करनी है कि अक्ल को काम में लायें। न नौकरी की उनको ज़रूरत, ऐसी हालत मे अगर अक्ल होती भी तो पड़े-पड़े जंग खाया करती। औलाद के मामले मे एक हद तक खुशनसीब हैं कि बस एक लड़की है, जो अभी कुँआरी है।

मलिक साहब के कहने के मुताबिक अल्लाह अपने किसी बन्दे से बहुत ज़्यादा ख़ुश हो जाता है तो उनको अपने खज़ाने से एक ऐसी लड़की दे देता है जैसी उनकी ग़ज़ाला। अलबत्ता मलिक साहब की रूह अगर किसी से काँपती है तो वह अपनी बेग़म साहिबा से। और सच तो यह है कि अगर मलिक साहब की बीवी ऐसी न होती तो मलिक का ख़ुदा ही मालिक था। बीवी क्या थी अच्छी-खासी कोतवाल थी—जहाँ एक लम्बी डाँट पड़ती बस भीगी बिल्ली बनकर रह जाते। घर के एक पुराने नौकर ने इसकी वजह यह बतायी कि मलिक साहब ख़ुद दरअसल निहायत टटपूंजिया किस्म के इन्सान थे। वह तो कहिए बेग़म साहिबा के वालिद ने उनको घर-दामाद बनाकर पाल लिया। यह सारी दौलत बेग़म साहिबा की है और मलिक साहब की हैसियत सिर्फ़ यह है कि वह बेग़म साहिबा की ड्योढ़ी पर शौहर के रूप में गोया नौकर हैं।

दूसरे दिलजले नौकर ने यह भी बताया कि बड़े मियाँ बड़े छिपे रुस्तम हैं और बड़े रंगीले भी रह चुके हैं। अगर बेग़म साहिबा ऐसी न होतीं तो यह कब का घर फूंक तमाशा देख चुके होते। यह उम्र होने को आई मगर बेग़म को अब तक बड़े मियाँ की तरफ से इतमीनान नहीं है कि न जाने कब यह बूढ़ा सींग कटाकर बछड़ों में शामिल हो जाए। नौकर के इस बयान की रोशनी में जो मलिक साहब को देखा तो सचमुच वह कुछ ऐसे ही नज़र आए।

□

दो

साहब, हमारा मालिक साहब का किस्सा यूँ शुरू होता है कि हम ठहरे परदेसी बल्कि खानाबदोश और दाना-पानी घसीटकर लाया इस दिल्ली में जहाँ सब कुछ मिल सकता है अलबत्ता अगर नहीं मिल सकता तो सिर्फ़ घर। और जब तक एक आदमी को घर न मिले वह कुछ अजीब उठाई-गीरा-सा नज़र आता है।

घर लेने के लिए अर्जियाँ दीं—मकान-मालिकों के पास सिफ़ारिशें पहुँचा दीं और इसके अलावा भी बहुतेरे इधर-उधर हाथ-पाँव पटके, मगर दाल न गली। तब आखिर ज़िन्दगी का मकसद सिर्फ़ यह रह गया कि होटल में सुबह चाय पीकर निकलना, शहर के किसी न किसी हिस्से में घुस जाना और हर घर को ललचाई हुई नज़रों से देखना कि काश यही खाली होता।

स्तर गिरते-गिरते कोठी से फ्लैट तक आया और अब फ्लैट से भी गिरकर तमन्ना सिर्फ़ यह थी कि बस एक दरवाज़ा नज़र आ जाये और उसमें बस दो कमरे हों, एक रसोईघर हो और एक गुसलख़ाना हो तो हम समझेंगे कि हमको महल मिल गया। मगर बस्ती तो बस्ती, यहाँ किसी कब्रिस्तान के आस-पास भी ऐसी जगह कोई न मिल सकी जिसको हम कम से कम घर कह सकें। सोचा, कोई पेइंग गेस्ट ही बना ले।

ख़ुदा भला करे एक ताँगे वाले का, जिसने मालिक साहब का पता बता दिया कि उनका घर ख़ाली है। जी चाहा कि उस ताँगे वाले को गले से लगाकर उसका मुँह चूम लें, मगर उसको इस बात के लायक न पाकर हौसले से काम लेना पड़ा। फिर भी ख़ुशी तो उबल ही रही थी।

एकदम जुबान से निकला—

'तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर। कहाँ है वह घर भाई ताँगे वाले ?'

ताँगे वाला बोला—'घर तो जरा दूर है, पर है खाली।'

हमने कहा—'दूर की परवाह नहीं, बस दिल्ली में होना चाहिए और खाली मिलना चाहिए।'

ताँगे वाले ने कहा—'खाली तो है ही, बस मलिक साहब की भैंस बँधी है उसमें। मगर मियाँ जी, आप अकेले ही हैं न ?'

हमने कहा—'यह क्या बात हुई ?'

ताँगे वाले ने कहा—'बात यह है कि मालिक साहब बीवी-बच्चों वाले को घर नहीं देते।'

यह वक्त बीवी-बच्चों को याद करने का न था लिहाजा हमने कहा—'भाई' मैं बिल्कुल अकेला हूँ, मगर घर कैसा है ?'

ताँगे वाले ने कहा—'बस घर है। एक कमरा तो ख़ैर बेकार-सा है। छत गिर गई थी उसकी। दूसरा कमरा ठीक है, उसी में आज-कल भैंस बँधी है। अलबत्ता पानी नहीं है—नल सड़क पर है···पर आपका क्या है, एक अकेले आदमी के लिए काफी है।'

हमने कहा—'और रसोईघर, गुसलखाना वगैरा···'

ताँगे वाले ने अचरज से हमारा मुँह देखकर कहा—'मालूम होता है घर आपको नहीं चाहिए।'

हमने गड़बड़ाकर जल्दी से सिगरेट पेश करते हुए कहा—'लो यह सिगरेट पियो। घर तो मुझको हर हालत में चाहिए, मगर मैं चाहता था कि अगर रसोईघर और बाथरूम भी होता तो अच्छा ही था—ख़ैर, न हो तो नहीं सही।'

ताँगे वाले ने सिगरेट सुलगाते हुए कहा—'ये चीजें होती हैं सब बेफिक्री की। आपको सर छिपाने की जगह मिल जाये तो बहुत है। वैसे मैंने उसमें रसोईघर बना लिया था एक तरफ।'

हमने चौंककर कहा—'अच्छा तुमने...? तो गोया तुम रह चुके हो उसमें ? तो छोड़ा क्यों तुमने

ताँगे वाले ने कहा—'पानी अगर बरस जाये तो टपकता बहुत है। मगर ख़ैर, पानी कभी-कभार बरसता है। अलबत्ता दूसरे घरों का पानी इसमें बहुत आता है और जब आता है तो फिर बाहर नही निकलता। तंग आ गया था मैं पानी निकालते-निकालते और उसी पानी की वजह से मच्छर बहुत पैदा होते हैं।'

हमने घबराकर कहा—'भई, यह तुमने बहुत बुरी सुनाई—इसका मतलब तो यह है कि फिर बेकार ही हुआ वह घर...'

ताँगे वाले ने घोड़ा मोड़ने का इरादा करते हुए कहा—'तो फिर जाने दीजिए। मैं तो ख़ुद ही जानता था कि आपको घर की असल में जरूरत नही है।'

हमने बदहवासी से बात काटकर कहा—'न, न, तुम समझे नही। मेरा मतलब यह था कि इस घर को तो ख़ैर ले ही लेना चाहिए, इसलिए कि मिल रहा है मगर इसमें रहकर कोई अच्छा घर जरूर तलाश करना चाहिए।'

ताँगे वाले ने खुश होकर घोड़ा आगे बढ़ाते हुए कहा—'अब कही है अपने मन की बात। यही मैंने भी किया था कि रहता इस घर में था और ढूँढता रहता दूसरा घर था, जब मिल गया तो हमने लानत भेजी इस घर। मगर एक बात का ख्याल रखियेगा बाबू जी कि रुपया इस घर मे ज्यादा न रखियेगा। चोरी का डर है।'

हमने कहा—'चोरी का डर'''मियाँ ऐसे बेहूदे घर में भी चोर आ सकते हैं?'

सिगरेट का कश लेकर वह इतमीनान से बोला—'बात यह है कि इस घर में कोई दरवाजा नहीं है, यूँ ही खुला पड़ा रहता है घर। एक बार तो कोई अल्लाह का बन्दा मेरी चारपाई और बिस्तर तक ले उड़ा दिन-दहाड़े।'

हमने घबराकर कहा—'भाई, रुपया-पैसा न सही, मगर कपड़े-लत्ते, किताब और जरूरत की एक-आध चीज़ तो रखनी ही पड़ेगी। ख़ैर, मैं देख तो लूँ उस घर को शायद दरवाजा लग सकता हो।'

ताँगे वाले ने भी इस बात को मान लिया और अपने घोड़

की शान में गुस्ताखियाँ करता हुआ आगे बढ़ता रहा, यहाँ तक कि आबादी बिल्कुल खत्म हो गई और खुला वातावरण आ गया। मैंने सोचा चलो सेहत ही अच्छी रहेगी। शहर के शोर से दूर जो है।

चलते-चलते हर तरफ मैदान ही मैदान नजर आने लगे। कहीं कोई आबादी नजर न आई हताश होकर आखिर ताँगे वाले से पूछा—'और कितनी दूर होगा वह घर ?'

ताँगे वाले ने बड़े इत्मीनान से कहा—'बस, इस मैदान के खत्म होते ही थोड़ी दूर और...'

और फिर हमने वक्त काटने के लिए यूँ ही एक बेहूदा-सा गीत गुन-गुनाना शुरू कर दिया ताकि कुछ तो कम्बख्त रास्ता कटे।

आखिर हमारे इन्तजार की घड़ियाँ खत्म हुई। ताँगे वाले ने घोड़े को चुमकारते हुए हमसे कहा - 'लीजिए बाबू जी, यह है घर !'

और हमने देखा कि वह एक टापू को घर कह रहा था। उसके आस-पास इकट्ठे हुए पानी की एक छोटी सी झील थी। हम भी इस बात पर गौर कर रहे थे कि तैरना हम जानते नही और यूँ जाहिरा कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा है।

ताँगे वाले ने कहा—'पहले चलकर मालिक साहब से मिल लीजिए, मगर फिर याद कर लीजिये कि बीवी बच्चे तो नहीं हैं ?'

हमने बीवी-बच्चों को याद करते हुए कहा—'नहीं भाई, बिल्कुल नहीं।'

ताँगे वाले ने कहा—'तो फिर आइए मेरे साथ।'

और वह हमको लिए हुए इस टापू से दूर एक खूबसूरत कोठी की तरफ बढ़ा। यह कोठी या तो वाकई बहुत शानदार थी या उस वीराने में खामखाह शानदार नजर आ रही थी। कोठी के खूबसूरत बाग में दाखिल होते हुए ताँगे वाले ने कहा—'कोठी क्या है—जंगल में मंगल है। अपना पानी, अपना बाग, अपने फल, अपनी तरकारियाँ और नाले पर अपना पुल।'

हमने कहा—'अपने पुल से क्या मतलब ?'

ताँगे वाले ने कहा इस पुल पर से मलिक साहब की मोटरें आ

जा सकती हैं। हम लोगों को इजाजत नहीं है। हम तो बस इसी रास्ते से आ सकते हैं जिससे आये हैं। वह देखिये, मलिक साहब बाग में टहल रहे हैं।'

और हमने देखा कि इन हजरत को हम कहीं देख चुके हैं। दिमाग पर काफी जोर डालने के बाद याद आया कि बहुत दिन हुए जब कहीं देखा है। शायद स्कूल के जमाने में और फ़ौरन याद आ गया कि इनको कहाँ देखा है। हिस्ट्री की किताब में लार्ड रिपन की देखी वह तस्वीर अपनी बराबरी पाकर दिमाग में इस वक्त उभर आई है।

अब हम मलिक साहब के बिल्कुल सामने पहुँच गये थे।

मलिक साहब को हमने सलाम किया। मगर वह ताँगे वाले की ओर मुखातिब हुए।

'कहाँ रहे ताजद्दीन इतने दिन ?'

मालूम हुआ ताँगे वाले का नाम ताजद्दीन है। वह खीसें निकाल कर बोला—'थोड़ा बीमार था, इसलिए नहीं आया। आज इन बाबूजी को लेकर आया हूँ। इनको घर चाहिए।'

मलिक साहब ने हमको सिर से पैर तक देखते हुए कहा, 'घर ?'

मानो हम घर थे और वह हमारा नक्शा देख रहे थे—'मगर घर यहाँ कहाँ धरा है ?'

ताँगे वाले ने कहा—'वही, जिसमें मैं रहता था।'

मलिक साहब ने कहा—'अरे वह...लाहौल विला कुव्वत। उसमें रहेंगे यह—क्या नाम है जनाब का ?'

हमने सच-सच बता दिया—'शौकत कहते हैं इस नाचीज को। बहुत मेहरबानी होगी अगर सर ढाँपने को कोई जगह दे दें।'

मलिक साहब ने गोया खुश होकर फरमाया—'इसका मतलब यह है गोया पढ़े लिखे आदमी हैं। सूरत से खानदानी और इज्जतदार मालूम होते हैं। वतन जनाब का ?'

अर्ज़ किया—'ग़रीबख़ाना लखनऊ में था।'

मलिक साहब ने बड़प्पन दिखाते हुए कहा—'और आपके साथ हैं कौन-कौन ?'

ताँगे वाले ने हमको घूरा। खैर न घूरता तो भी हमको याद था कि गोया हम अकेले हैं। इसलिए कहा—'कौन हं ला किबला, अकेला हूँ, होटल में पड़ा हूँ मगर होटल की जिन्दगी शरीफाना नहीं।'

मलिक साहब ने हामी भरी—'हरगिज शरीफाना नहीं! बहरहाल आप मेरे साथ रहिए—वह घर मैं ठीक करा दूंगा तो उसमें चले जाइएगा।'

और सिर्फ यही नहीं, ताँगे वाले को भी खुद ही किराया देकर विदा किया। लाख कहा कि सामान ले आऊं, कहने लगे—कल आ जाएगा।

□

तीन

तांगे वाले को विदा करने के बाद मलिक साहब ने हमको वही कमरा दिखाया जिसमें हम इस वक्त भी मौजूद हैं और यह आपबीती लिख रहे हैं। इस कमरे को देखकर आँखें खुल गईं—किसी तरह यकीन न आता था कि इस दुनिया के इस दौर में मेहरबान इन्सान भी मौजूद हैं कि जान पहचान नहीं और उस पर ही मेहरबान हो गये। आये थे किरायेदार बनने और बना लिए गए मेहमान। बड़ी किस्मत की बात थी।

मलिक साहब ने यह कमरा दिखाकर फरमाया—'मियाँ, मैं तुम्हारी सिर्फ़ एक बात सुनकर इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि तुम वाकई शरीफजादे हो। तुमने यह कहा कि होटल की जिन्दगी शरीफाना नहीं है। मुझसे पूछो कि इस होटल की चाट का कैसा दाग खाए बैठा हूँ। बहरहाल फिर अर्ज करूँगा आपसे अपना दु:खड़ा। फिलहाल आप गुसलखाने में हाथ-मुँह धोकर ताजा हो जाइये।'

हमने अपनी हालत पर गौर करते हुए कहा—'आपकी इलतजा पर कुछ अर्ज तो न कर सका मगर अब गौर कर रहा हूँ, बहरहाल मुझको बिस्तर वगैरा के अलावा यह सूट भी तो उतारना पड़ेगा और···।'

मलिक साहब ने कहा—'वह सब ठीक है, उतर जायेगा सूट भी, तुम हाथ-मुँह धो लो जब तक।'

और यह कहकर कमरे से मिले छोटे कमरे में लगभग धकेल ही दिया कि बाथरूम हमको खुद नजर आ जाये और खुद एक तरफ चल दिए। मजबूरन हमने कोट उतारकर एक तरफ टाँगा और हाथ-मुँह धोकर तौलिये से अभी मुँह पोंछ ही रहे थे कि बाहर से आवाज आई—'आ जाओ

भाई, अब ठण्डी हो जायेगी चाय।'

हम जल्दी से कोट पहिनकर बाहर जो आए तो मलिक साहब गरमा-गरम चाय अपनी प्याली में उँडेल रहे थे।

मैंने अपने लिए चाय बनाई और फिर कहा—'मुझे तो यकीन ही नहीं आ रहा कि मैं जो देख रहा हूँ, वह सच है या ख्वाब'''।'

मलिक साहब ने बग़ैर मुस्कराए हुए संजीदगी के साथ कहा—'ख्वाब तो यह खैर क्या होना, है तो सच ही मगर मैं लगातार एक और बात सोच रहा हूँ। आप यहाँ एक कॉलिज में प्रोफेसर हैं—ज़ाहिर है कि रोज कॉलिज से वापस आना होगा और खुदा के फ़ज़्ल से यह जगह शहर से बाहर है ''आपको आने-जाने की तकलीफ होगी—मगर चूंकि आप घर के लिए परेशान हैं, लिहाज़ा यह सब-कुछ नहीं सोच रहे हैं और चूंकि यह सुन पाया है कि यहां एक घर मिल सकता है लिहाजा यहाँ तक दौड़े चले आये हैं।'

अर्ज़ किया—'आप ठीक कहते हैं मगर मैं इस पर ग़ौर कर चुका हूँ। मैंने देखा है कि यहाँ से एक मील के फासले तक बस आती-जाती है लिहाजा यह मुश्किल मेरे नज़दीक हल हो गई है।'

मलिक साहब ने कहा—'खाक हल हो गई है'''लो, यह लो केक। मियाँ, यह घर का है। यहाँ जो कुछ तुमको मिलेगा, घर ही का है। घर का पानी इसलिए है कि ट्यूबवेल अपना है—मोटर लगा लिया है और वाटर-वर्क्स का मजा आता है। बहरहाल, तो मैं कह रहा था कि इसको मुश्किल का हल होना न समझो। अव्वल तो मैं बस के भरोसे की बात बेकार समझता हूँ। दूसरे ज़रा-सी बारिश हो जाए फिर बस तक पहुँचने के लिए तुमको स्टीमर की ज़रूरत पड़ जाएगी। और मियाँ सबसे बड़ी बात तो यह है कि जिस घर को तुम घर समझकर आ गए हो वह एक सिरे से घर ही नहीं है। अस्तबल था किसी ज़माने में और अब उसमें भैंस बँधती है।'

अर्ज़ किया—'यह बात अगर आप ताँगे वाले की मौजूदगी में फरमा देते तो वापसी की आसानी रहती।'

मलिक साहब ने हैरत से फरमाया 'वापसी का सवाल कैसे पैदा

हुआ'''अब वापसी का क्या सवाल ! मैं तो यह कह रहा था कि यह बस बहीरा का किस्सा है वाहियात। घर की कार है, ड्राइवर मुफ्त की रोटियाँ तोड़ा करता है, अब कम-से-कम यह तो करेगा कि पहुँचा आया तुमको और ले आया।'

हमने हैरत से मलिक साहब का मुँह देखा—ताँगे वाले को वापस कर दिया है और वह समझ चुके हैं कि जरूरत आसामी फँसा है। इसलिए अब यह भौंडा मजाक हो रहा है। भला कोई पूछे कि हम आपके कौन, हमको आप न सिर्फ इस शानदार सूट में ठहराएँगे बल्कि कॉलिज आने और जाने के लिए कार तक देंगे। मगर इस मजाक का जवाब ही क्या दे सकते थे—बँधा हुआ मार खाता ही है लिहाजा खिसियानी हँसी हँसकर रह गए ?

मलिक साहब ने हँसी पर संजीदगी के साथ कहा—'हँसी की बात नहीं, मैं सच कह रहा हूँ, बिल्कुल हराम की तनख्वाह मिल रही है उस ड्राईवर को। मैं कहीं आता-जाता नहीं—अपनी यह छोटी-सी दुनिया बसाये अलग पड़ा हूँ—रह गई बेगम और बच्ची, वे कभी-कभार शहर हो आए वरना कार बेकार ही पड़ी रहती है।'

अर्ज किया—'यह तो ठीक है मगर मैं हैरान हूँ कि आखिर मुझ पर इतनी मेहरबानी क्यों'''

मलिक साहब ने जो कुछ चबा रहे थे उसको निगलते हुए कहा—'मियाँ, क्या बात कहते हो ! तुम होटल की जिन्दगी को ग़ैर-शरीफाना समझते हो और एक वह नमकहराम है। बखुदा सूरत से नफरत हो गई है उसकी। सामने आ जाता है तो खून का घूंट पीकर रह जाता हूँ—जी चाहता है कि गोली मार दूं। साहब, हमने पाला-पोसा, दिन को दिन और रात को रात नहीं समझा ! सिखाने-पढ़ाने के लिए कौन-कौन-सी कोशिश नहीं की। अच्छे से अच्छा खिलाया, अच्छे-से-अच्छा पहनाया मगर इस होटलबाजी ने उस मरदूद को दो कौड़ी का कर दिया।'

हमने पूछा—'यह किसका जिक्र है जनाब ?'

दाँत पीसकर बोले— 'एक नालायक का जिक्र कर रहा हूँ बात दर-असल यह है कि मेरी सिर्फ एक बच्ची है। जिन्दगीभर की कमाई—बड़ी

ही होशियार और समझदार, खाना बनाने, सीने-पिरोने, हर काम में समझदार। यह केक उसी ने बनाया है। जरा खाकर देखो तो सही।'

अर्ज किया—'जी हाँ, मैंने खाया है, वाकई बड़ा बढ़िया है।'

जोश में बोले—'है न बढ़िया! तो साहब ऐसी है वह लड़की, फिर यह कि अंधे की लाठी। जिसकी एक औलाद हो वह क्योंकर गवारा कर सकता है कि उसको अपने से जुदा करे—चूंकि इसी ख्याल से कि लड़की घर में रहे, अपने एक अजीज का लड़का मैंने अपने पास रखकर सब-कुछ उस कम्बख्त के लिए किया। मगर साहब उसने जवान होते ही वह लक्षण दिखाये कि क्या बताऊँ—ऐ जनाब, उसने होटलबाजी शुरू कर दी।'

हमने अचरज से पूछा—'यह होटलबाजी आखिर क्या होता है?'

कहने लगे—'क्या कहा, होटलबाजी? अरे साहब, उसी ने तो इस लौंडे का नाश मारा है। शुरू-शुरू में यह शौक उठा कि आज उस दोस्त के लिए होटल में बैठे चाय उड़ा रहे हैं—तब उस दोस्त के साथ होटल में जमे हुए हैं। लाख समझाया कि मियाँ यह शरीफों के तरीके नहीं, ऐसा ही है तो दोस्तों को घर लाओ—मगर तोबा कीजिए, घर से निकला कि होटल में मौजूद। नतीजा यह कि लग गई वह हरामजद भी मुँह से।'

चौंककर कहा—'यानी शराब?'

कहने लगे—'आख थू! जी हाँ, वही कम्बख्त और अब दिन-रात पी रहे हैं और जुआ हो रहा है—डराया-धमकाया मगर तोबा कीजिए—और तो और एक दिन होटल में जाकर देखता क्या हूँ कि एक बाजारी औरत···मियाँ सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया।'

हमने कहा—'इसमें होटल से ज्यादा इनकी आदतों का कसूर था।'

कहने लगे—'बात यह है कि होटल अपना ही था और मैं जानता हूँ कि होटल मुसाफिरों में ज्यादा किन लोगों का अड्डा होता है। हुआ यह कि कम्बख्त की तरफ से सब्र कर लिया। होटल भी बेच दिया और अब होटल के नाम से मेरे हाथ कानों पर जाते हैं। मैंने यही तय किया कि तुम चाय पियो तो गाड़ी निकलवाकर मैं तुम्हारे साथ चलूँगा और होटल से सामान ले आऊँगा। तकल्लुफ को अलग करके इसे अपना घर समझो—तुम्हारे जैसे शरीफ आदमी की जगह होटल नहीं, किसी शरीफ का घर है।'

मलिक साहब के साथ जाकर हम होटल से सामान ले आए। □

चार

एक शरीफ आदमी के यहाँ एक शरीफ आदमी जाहिरा तौर पर बड़ी शराफत के साथ ठहरा हुआ था। मगर हम बराबर इसी फिक्र में थे कि किसी तरह शहर में अच्छा घर मिल जाए इसलिए कि उस शराफत का उस वक्त तक डर था जब तक मलिक साहब को यह खबर नहीं होती कि हम भी न सिर्फ बीवी वाले हैं बल्कि अपनी तोतली ज़बान से 'डेडी' को 'जैडी' कहने वाला एक फूल-सा बच्चा भी है। बेईमानी तो यह ज़रूर की कि हम अपना शादीशुदा होना छिपाये हुए थे, घर की वजह से।

मगर बस भेद के खुलने के बाद घर छिन जाने का डर इस तरह दिलो-दिमाग पर छाया था कि क्या बताएँ! लेकिन सवाल यह था कि हमने मलिक साहब से यह कब कहा था कि हम उनकी साहबज़ादी से शादी कर लेंगे और मलिक साहब ने यह कब कहा था कि वह हमारी इसी मकसद के लिए मेहमानदारी कर रहे थे।

हाँ, यह बात ज़रूर थी कि अगर मलिक साहब को मालूम हो जाए कि हम बीवी-बच्चे वाले हैं तो हमारा इस घर में रहना नामुमकिन है। ताँगे वाले ने भी हमसे पहले ही कह दिया था कि मलिक साहब बीवी-बच्चों वालों को नहीं रखते और उसकी वजह भी हमको मालूम हो चुकी थी कि हमसे पहले एक-आध और किरायेदार को ताँगे वाला ला चुका था और मलिक साहब को जब यह मालूम हुआ कि उम्मीदवार बाल-बच्चों वाला है तो उन्होंने साफ़ जवाब दे दिया। अब जिस दिन हमें तनख्वाह मिली तो हमने पूरी तनख्वाह ले जाकर उनके सामने रख दी।

नोटों की गड्डी देखकर बोले—'यह क्या है?'

अर्ज किया—'पहली तारीख थी आज—तनख्वाह मिली है।'

खुश होकर बोले—'खुदा मुबारक करे। तुमने दी, मैंने पाई। अब खर्च करो इसको।'

हमने कहा—'खर्च किस काम में करूँ? जिन जरूरतों के लिए रुपये चाहा करते हैं वे सब तो अपने-आप इस तरह पूरी हो जाती हैं जैसे जन्नत मे बैठा हूँ। अब मेरी समझ में इन रुपयों का खर्च नही आ रहा है।'

मलिक साहब ने बड़ी चालाकी से कहा—'भई, किसी अजीज को भेजने हों तो भेज दो।'

हमने कहा—'जी, हाँ जिन अजीजों को भेज सकता हूँ, उन्हीं की खिदमत में पेश कर रहा हूँ।'

और भी खुश होकर बोले—'यानी मैं? अच्छा भई लाओ, इसका फैसला न मैं कर सकता हूँ, न तुम कर सकते हो—यह फैसला करेंगी बेगम!'

और यह कहकर नोटों की गड्डी हाथ में लिए अन्दर तशरीफ ले गए और थोड़ी देर में अन्दर के एक दरवाजे से हमारे कमरे में तशरीफ लाते हुए बोले, 'लीजिए साहबजादे, अपने मुकदमे की खुद पैरवी कीजिए ···अदालत मौजूद है।'

दरवाजे से बेगम साहिबा की आवाज आई—'अच्छा वकील साहब, आप चुप रहिए।'

मलिक साहब ने खीसें निपोरकर फरमाया—'अदालत की रियायत से वकील की भी एक ही रही।'

हमने बेगम साहिबा के जवाब में दूर ही से अर्ज किया—'मैं आदाब अर्ज करता हूँ।'

बेगम साहिबा ने अपनी आवाज को बेपर्दा करते हुए फरमाया—'जीते रहो मियाँ! हजारी उम्र पाओ—भाई यह रुपये कैसे भेजे हैं?'

मलिक साहब ने टोका—'भाई? यानी शौकत मियाँ आपके भाई कैसे हो गए?'

बेगम साहिबा ने कहा—'तोबा है तुमसे भी! यह रिश्ता नहीं है, मैंने यूँही मुखातिब किया है—हाँ मियाँ, तो यह रुपये कैसे भेजे हैं?'

मलिक साहब फिर बोले—'मियाँ···?'

बेगम साहिबा ने डाँटकर कहा—'शर्म तो नही आती तुमको ऐसी बातें करते हुए कि वह मसल बूढ़े मुँह मुहासे लोग चले तमाशे...बच्चों के सामने चुहलें सूझ रही हैं।'

हमने इस किस्से को रफा-दफा करते हुए अर्ज किया—'तनख्वाह मिली थी मुझको।'

बेगम साहिबा ने कहा—'यह तो मैं समझ गई मगर यह नहीं समझ में आया कि मुझे क्यों भेजी है ?'

हमने कहा—'सिर्फ अपने को खुश करने के लिए कि हमारा भी कोई है जिसको हम तनख्वाह दे सकते हैं।'

मलिक साहब ने कहा—'सुन लीजिए, बेगम साहिबा ! अब तो आपको यकीन आया कि जो कुछ कहता था ठीक कहता था ?'

बेगम साहिबा ने कहा—'बेटे !'

मलिक साहब चीख उठे 'आयँ···अच्छा इन्हीं से कह रही हो—मैं कहूँ कि तुमको हुआ क्या है।'

बेगम साहिबा ने वाकई झिड़कते हुए कहा—'बात करने दोगे या तमाशा बना रखा है ?'

मलिक साहब सहम गये—'अच्छा-अच्छा, तुम बात करो।'

बेगम साहिबा ने फरमाया—'मैं यह कह रही थी शौकत मियाँ कि अगर मेरा कोई लड़का होता, मुझको उससे जिस फरमाबरदारी की उम्मीद हो सकती थी वह तुमने दूर कर दी। अब यह मेरी तरफ से कबूल कर लो और अपना हिसाब किसी बैंक में खोल लो।'

हमने कहा—'आप ही इन्साफ कीजिए कि अब यह रुपया मेरे किस काम का है। सब काम अपने आप हो जायें तो रुपये की जरूरत ही क्या रह जाती है।'

बेगम साहिबा ने कहा—'तो गोया तुम अपने खाने-पीने का मुआवजा दे रहे हो।'

हमने कहा—'जी नहीं। आप मुझको गलत न समझिये। मैं हर चीज का मुआवजा दे सकता हूँ, मगर इस प्यार और लगाव का क्या मुआ-

बजा हो सकता है जो आप दे रहे हैं, सिवाय इसके कि मैं बिक जाऊँ।'

बेगम साहिबा ने फौरन बड़ी बात कह दी—'ऐसी बेशक़ीमत चीज़ तो बेशकीमत चीज़ ही से बदली जा सकती है बेटा—'और मुझे खरीदने या तुमको बिकने की ज़रूरत ही क्या है—तुम तो मेरे ही हो।'

मलिक साहब ने फ़रमाया—'हाँ, यह बात बड़ी जोर की कही है तुमने। अब फरमाइये मियाँ!'

हमने कहा—'तो आखिर इतने से रुपयों के लिए इतना बड़ा झगड़ा क्या है?'

बेगम साहिबा ने फरमाया—'झगड़ा कुछ नहीं—तुमने मुझको आज़-माया, मेरा जी खुश हो गया। दिल से दुआयें निकलीं—मेरी खुशी यह है कि तुम अपने नाम का हिसाब किसी बैंक में खोल लो।'

मलिक साहब बोले—'खुल जायेगा हिसाब।'

बेगम साहिबा ने कहा—'और देखो शौकत मियाँ, तुमको मेरी ही कसम है जो एक पैसा भी किसी ज़रूरत पर ख़र्च करो···और मैंने कहा सुनते हो!'

मलिक साहब ने, जो एक तस्वीर देखने लगे थे, फ़रमाया—'मुझसे कहा?'

बेगम साहिबा ने कहा—'हाँ, तुम ही से कह रही हूँ—वह कपड़े क्या यूँ ही पड़े रहेंगे, दर्जी निगोड़ा मरा आखिर कब आएगा?'

मलिक साहब ने फरमाया—'अरे भई, इनको दिखाओ भी तो, पसंद भी करते है या नहीं। शौकत मियाँ, बात यह है कि उस रोज यह माँ-बेटी शहर गयी थीं और दूसरी चीज़ों के साथ आपके लिए भी कुछ कपड़े लाई हैं।'

हमने कहा—'कपड़े तो मेरे पास काफी हैं।'

बेगम साहिबा ने कहा—'बेटा, कॉलिज जाते हो, वहाँ ज़रा शान से रहना चाहिए। कपड़े अल्लाह रखे, काफी ज़रूर हैं मगर मैं एक सूट और दो बुशर्ट के कपड़े अपनी पसन्द के लाई हूँ।'

मलिक साहब ने कहा—'जी, और क्या, ग़ज़ाला ने पसन्द किये हैं··· बहरहाल इनको दिखाओ तो सही।'

कपड़े सचमुच बड़े बेशकीमती होने के अलावा सुन्दर भी बहुत थे, मगर अब दिल में यह काँटा और भी खटकने लगा कि यह जो कुछ जिस वजह से हो रहा है, वह कितना गलत है।

काश किसी तरह जल्दी से जल्दी कोई घर मिल जाये वरना यह किस्सा लम्बा ही होता जाता था।

□

पाँच

आज कॉलिज में बैठकर बेगम को पत्र लिख रहा हूँ कि हम किस तरह यहाँ दिल्ली में एक अच्छी-खासी ससुराल में बैठे हुए हैं। एक-एक बात खोलकर लिख दी कि दिल कुछ तो हल्का हो। इन्सान अगर अपने किसी कसूर को मंजूर कर ले तो दिल हल्का हो जाता है। यह बात बीवी को तो लिख सकते हैं कि घर की मजबूरी क्या गुल खिलाए हुए है।

अब मुसीबत यह है कि न तो कोई दूसरा घर ही बदकिस्मती से मिल रहा है और न मलिक साहब ही इस खाकसार को छोड़ने के लिए तैयार हैं लिहाजा मैं उनकी मेहरबानियों तले दबता चला जाता हूँ और इसका अंजाम दिन-दिन खौफनाक ही नजर आ रहा है।

अब तक तो खैर यह था कि जफर साहब यानी वही साहबजादे, जिनकी तबाही की वजह से मलिक साहब के कहने के मुताबिक होटल शरीफों की जगह नहीं, वह कभी यहाँ आते-जाते रहते थे और बावजूद नाराजगी के मलिक साहब से पूरे तौर पर अलग भी नहीं हो सकते कि खुदा जाने आखिर में इन्हीं हजरत की एड़ी के नीचे चोटी आ जाए तो क्या होगा ? मगर अब नक्शा ही बदला हुआ था।

आज ही हम जब कॉलिज से वापस आए कि वह कम्बख्त जाने कहाँ से आ मरा। अजीब जली-कटी अदाओं के साथ हमारे साथ पेश आया करते थे। अत: आज भी हमने उन्हें देखकर जब सलाम किया तो हाथ जोड़कर खड़े हो गए, बोले—'अब यह सलाम करने का हक भी मुझसे छीन लेंगे आप ?'

हरने बिल्कुल सही बात कही—'आप अपने सारे हक़ वैसे ही समझिए—कम से कम मुझसे आपको कोई शक न होना चाहिए। मैं तो सिवाय मेहमान के और कुछ नहीं हूँ।'

ज़फ़र साहब ने अपने टैली लगे छल्लेदार बालों को कुछ बिखेरते हुए फ़रमाया—'जी ज़रूर आप मेहमान हैं, क्योंकि···

हमारे मेहमान जो आये बनकर वह ज़ुल्म करने लगे हमीं पर,
ज़िनम तो देखो मकाँ के बाहर मकान वाले पड़े हैं।

हमने अर्ज़ किया—'आप बिल्कुल ग़लत समझ रहे हैं—मेरी वजह से आप घर से बाहर नहीं हुए हैं बल्कि आपके बाहर पड़े रहने की वजह से शायद मैं यहाँ पड़ा हुआ हूँ।'

ज़फ़र साहब आदमी ज़रा बेवकूफ़ भी हैं—गुस्सा बहुत जल्दी आ जाता है, कहने लगे—'ख़ैर आप किसी वजह से पड़े रहें मगर यह याद रखियेगा कि लाठी मारे पानी अलग नहीं हुआ करता। आपका जादू बहुत ज़्यादा न चल सकेगा। हक़ हक़दार ही को मिला करता है।'

अब बताइये इनका क्या जवाब था। हमने उनकी इस बदतमीज़ी को पीकर कहा—'आप तो ख़ामख़्वाह नाराज़ हो गये। यहाँ हक़ का तो कोई ज़िक्र ही न था। मैं तो पहले ही अर्ज़ कर चुका हूँ कि मैं सिवाय मेहमान के बख़ुदा कुछ भी नहीं हूँ।'

ज़फ़र साहब ने मज़ाक से मुँह बनाकर फ़रमाया—'जैसे आप मेहमान हैं उनको आप भी जानते हैं और मुझे भी गधा न समझियेगा, मैं सब कुछ समझता हूँ।'

हमने अब कोई जवाब देना ठीक न समझा। ऐसे आदमी से कोई समझदार आदमी बात नहीं कर सकता था, लिहाज़ा ख़ामोशी से अपने कमरे की तरफ़ रुख़ किया। मगर वह हज़रत सामने आ गये, शायद वह आज यह तय करके आये थे कि ज़बरदस्ती टक्कर लेंगे।

कहने लगे—'और अब यह भी सुन रखिये कि शराफ़त और ज़ब्त की भी एक हद होती है। मैं बड़े सब्र और ज़ब्त से काम ले रहा हूँ कि अब तक चुप हूँ मगर आख़िर कब तक?'

हमने अब वाक़ई उस बेवकूफ़ पर तरस खाकर समझाते हुए कहा—

'भाई मेरे, मैं तुमको किस तरह यकीन दिलाऊं कि मैं किसी सूरत मे न तुम्हारा विपक्षी हूँ और न ही मुझे तुम्हारी दिलचस्पियों से कोई सरोकार है। तुमने जो अन्दाज़ा किया है वह बिल्कुल ग़लत है।'

आँखों में आँखें डालकर बोले—'अन्दाज़ा ग़लत है मेरा ? यह आप कह रहे हैं ? हुजूरेवाला, मुझे एक-एक बात की ख़बर रहती है। मुझे मालूम है कि आप हर तरह से मेरी जगह पाना चाहते हैं। जो कमरा आपके कब्ज़े में है उसमें मैं कभी रहा करता था। अब मैं ठोकर खाता फिरता हूँ और यहाँ आपका क़ब्ज़ा है। मैं बाईसिकल पर यहाँ आया हूँ और आप मोटर पर उड़ते फिर रहे हैं···मुझे सब मालूम है—सब समझता हूँ मैं···हाँ !'

हमने एक हद तक उस बेचारे को समझाने की कोशिश की—'इस बात का जवाब तो आपको वक्त देगा कि मैं आपके रास्ते में बिल्कुल नहीं हूँ—दरअसल आपने मलिक साहब को अपने से नाराज कर रखा है। बल्कि मैं तो इसके लिए भी तैयार हूँ कि अगर आप अपने और मलिक साहब के बीच सुलह-सफाई कर लें तो मुझे बड़ी खुशी होगी—मैं इसमें आपकी मदद के लिए भी तैयार हूँ।'

जफर साहब ने गौर से सुनकर बड़े बाजारी अन्दाज से फरमाया—'यार, बड़े घुटे हुए हो। क्या मीठी जबान पाई है। गोया आप करायेंगे मेरे और मलिक साहब के बीच सुलह-सफाई ? क्या बात कही है ! मान गये उस्ताद ! गोया ऐसे ही तो बेवकूफ हैं कि आपको इतना बेवकूफ समझ लें कि आप मेरी ख़ातिर खुद अपने लिए कब्र खोद लेंगे, यह जानते हुए कि उस सुलह-सफाई के बाद आपकी दाल न गल सकेगी।'

मैंने उसे बहुतेरा समझाने की कोशिश की कि भाई न मेरी कोई दाल है जो मैं यहा गलाना चाहता हूँ और न आपके किसी हक़ पर छापा मारने बैठा हूँ। मैं तो घर की तलाश में यहाँ पहुँचा था और खुद हैरान हूँ कि एक अजनबी के साथ मलिक साहब की ये मेहरबानियाँ क्या मतलब रखती हैं ?

जफर साहब ने हँसकर फरमाया—'आप नहीं जानते तो फिर आप वाकई भोंदू हैं साहब साफ़ है कि मलिक साहब को अपनी

लड़की के लिए एक ऐसे बेवकूफ की जरूरत है, जिसको वह अपने अस्त-बल में बाँध लें। मुझसे नाराजगी की वजह सिर्फ़ यह है कि उनकी साहब-जादी की उम्मीद में मुझसे उनके इशारों पर नाचा न गया, मगर आप ठहरे चालाक आदमी। आपने चन्द ही दिन में उनको ऐसा शीशे में उतारा है कि सवारी के लिए मोटर है, खिदमत के लिए नौकर-चाकर हैं। खुद मलिक साहब आँखें बिछाये है। उनकी मेम साहब भी जनाब के नाम की माला फेर रही हैं। मगर मैं आपको इस आसानी के साथ कामयाब न होने दूंगा —अगर आप यह समझ ले कि मैं आपकी इन चिकनी-चुपड़ी बातों में आकर चकमा खा जाऊँगा तो मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि मैं वाकई इतना गधा नहीं हूँ।'

हमने तंग आकर कहा—'आखिर आप मुझसे क्या चाहते है?'

जफर साहब ने फरमाया—'चाहता मैं कुछ नहीं हूं—सिर्फ़ आपको यह बता दिया है कि अगर अपनी जान की खैर चाहते हो तो हाथियो से गन्ना खाने का शौक न फरमाइयेगा।'

हमने झुंझलाकर कहा—'आपकी सलाह का शुक्रिया। जब कभी ऐसा इरादा होगा मैं आपकी सलाह पर गौर कर लूंगा।'

और अब सचमुच हम इस औंधी खोपड़ी वाले इन्सान से सर न खपा सके। हैजी के साथ अपने कमने कमरे में जो दाखिल हुए तो मियाँ गफूर को, जो हमारी टहल पर मलिक साहब की तरफ से तैनात थे, दरवाजे से लगा हुआ पाया।

वह हमारे करीब आकर धीरे से बोला—'साहब, मैंने सब बातें सुन ली हैं। आपको मालूम नहीं—इसके काटे का ताबीज नहीं है। आप इससे होशियार रहियेगा—छटा हुआ गुण्डा है यह।'

हमने लापरवाही से कह दिया—'तुम कुछ फिक्र न करो। इस तरह के लोग नुकसान पहुंचाते नहीं, नुकसान उठाते हैं—बेवकूफ है यह लड़का।'

गफूर ने कहा—'बेवकूफ न होता तो आज यह हालत क्यों होती··· मगर साहब, अब इससे होशियार रहने की जरूरत है।'

हमने गफूर को समझा-बुझाकर ठंडा किया वरना वह बेहद परेशान नजर आ रहा था।

यह नौकर भी बड़ा अजीब है। सिर्फ़ टहल ही नहीं करता बल्कि इस टहल में प्यार भी शामिल रहता है। इतना ख्याल रखता है हर बात में कि क्या अर्ज करूँ? उसे हमारी हर बात की फिक्र रहती है। □

छह

मलिक साहब की गैरहाज़िरी का फ़ायदा उठाकर आज हम सुबह नौ ही बजे घर से टहलते हुए चल खड़े हुए और एक मील का यह बेहूदा रास्ता, जो मोटर में बैठकर इतना बेहूदा महसूस नहीं होता जितना दर-असल है, पैदल ही तय किया।

नतीजा यह कि उस वक्त बस-स्टाप पर पहुंचे हैं तो जूतों पर नजर पड़ते ही महसूस हुआ कि गोया ग़लती से ग़फ़ूर के जूते जल्दी में पहन आए हैं। जब ज़मीन पर कई बार पैर पटके और धूल कुछ छँटी तो इस जूते में कुछ बराबरी के लक्षण पैदा हुए।

अब बस की इन्तजार में जो खड़े हुए तो मालूम यह हुआ कि सचमुच अगर इस बस के सहारे कॉलिज पहुँचने का स्थायी प्रोग्राम बना लिया जाए तो यह कुछ ज़रूरी नहीं कि कॉलिज खुलने ही के वक्त पहुँच सकें, यह भी हो सकता है कि कॉलिज बन्द होने के बाद हम वहाँ तक पहुँच पायें।

हमारे देखते ही देखते सवारियों से सचमुच भरी हुई दो बसें न सिर्फ गुज़र गयीं बल्कि उनकी सवारी हँसी भी। मगर खुदा का शुक्र है कि तीसरी बस कुछ खाली थी—कुछ से हमारा मतलब है कि बैठने की न सही, खड़े होने की जगह मिल गई और हम ठीक उस वक्त कॉलिज पहुंच गए जब पहला घण्टा गुज़र चुका था और अब यह ज़रूरी हो गया कि प्रिन्सिपल साहब से जाकर कम से कम यह कह दूं कि हस्पताल से गले में दवा लगवाते हुए आये हैं वरना आवाज़ ही न निकलती थी और यह तय

कर रहे थे कि कल बजाय नौ बजे के आठ बजे बस-स्टाप पर पहुंच जायेंगे।

कॉलेज का वक्त खत्म होने के बाद बस की कल्पना को मन में सँजोए हुए बाहर निकले ही थे कि मलिक साहब के ड्राइवर मियाँ रहीम ने आगे बढ़कर सलाम किया। हमने हैरत से कहा—'मियाँ, तुम कैसे आ गये ?'

रहीम ने बड़ी फिक्र से कहा—'सरकार ने तो सारा घर सिर पर उठा रखा है, जबसे उनको मालूम हुआ कि आप गाड़ी नहीं ले गये। मुझसे कहा है कि फौरन गाड़ी लेकर पहुंच जाऊं, ऐसा न हो कि आपको वापसी में भी तकलीफ हो।'

हमने गाड़ी में बैठते हुए कहा—'मलिक साहब वापस कब आये ?'

रहीम ने कहा—'वह तो बारह बजे ही आ गए थे। बस उसी के बाद से छानबीन हो रही है कि आप आखिर गाड़ी बग़ैर क्यों गये—गफ्फूर ने शायद कुछ बातें कही हैं। इसके बाद से और भी गुस्सा है।'

और हम समझ गये कि ग़फूर से इस मामले में जब छानबीन हुई होगी तो हज़रत ने ज़फर साहब के आने और हमसे उलझने का किस्सा जरूर कह सुनाया होगा और अब हम रास्ते ही में अपने को जवाब देने के लिए तैयार करने लगे।

जब हम कोठी में दाखिल हुए तो मलिक साहब को अपनी ही इन्तज़ार में टहलते हुए पाया। हमको देखते ही दहाड़े—'यानी यह क्या वाहियात हरकत की है कि बग़ैर मोटर के आज चलते हुए ?'

हमने बात बनाई— 'हुआ यह कि मेरे एक साथी प्रोफेसर साहब सुबह आ गए थे, उन्हीं की गाड़ी में चला गया था।'

आँखें निकालकर बोले—'गलत ! मुझे सब मालूम है। आप तो सुबह नौ बजे घर से पैदल बस के अड्डे तक गये। खाक छानने और बड़ी उम्मीदवारी के बाद आपको एक घण्टे के बाद बस मिली।'

हमने हँसकर कहा—'जब आपकी सी० आई० डी० ऐसी ही ज़बरदस्त है तो झूठ बोलना ही गोया बेकार हुआ। बात यह हुई कि मैंने सोचा कि आज जरा यह अन्दाजा करके देखूँ कि अगर आप मुझ पर ऐसे मेहरबान न होते तो मैं किस तरह जाया करता।'

नथुनों को फुलाते हुए फरमाया—'यह भी ग़लत है। आप अन्दाज़ा करने के लिए नहीं गए थे बल्कि मुझे सब मालूम हो चुका है कि कल वह उल्लू का पट्ठा यहाँ आया था और आपसे काफी बदतमीज़ियाँ करके चला गया है। मैं यह पूछता हूँ कि आपने उसी वक्त किसी नौकर से यह क्यों न कह दिया कि उसको कान से पकड़कर बाहर निकाल दे। बहादुर बनता है तो मेरी मौजूदगी में क्यों नहीं आता और आप भी उसकी बातों में आ गये···उसका इलाज तो सिर्फ़ यह था कि उतारा होता जूता तुमने और बेहिसाब शुरू कर देते उस बदमाश की ताज़पोशी···।'

और फिर ग़फूर से मुखातिब होते हुए कहा—'कान खोलकर सुन लो—अब अगर मैंने यह सुना कि वह मरदूद इस कोठी के आस-पास नजर आया है तो तुम्हारे हक में मुझसे बुरा कोई न होगा।'

हमने कहा—'आपको शायद कुछ ऐसी बातें बताई गई हैं, जिनसे आप नाराज़ हो गये हैं—मगर ऐसी कोई बात न थी।'

मलिक साहब ने उन्हीं बिफरे हुए तेवरों से फरमाया—'बात थी या नहीं मगर वह यहाँ नहीं आ सकता, बहरहाल आप चलकर कपड़े-वपड़े बदलिए और फिर बेग़म साहिबा को समझाइएगा जो मुझसे ज्यादा खौल रही है इस बात को सुनकर! मियाँ, अगर तुम कल अन्दर ही कहलवा देते तो मेरी बीवी तुम्हारे सर अजीज़ की कसम वह दुम में नमदा बाँधती उस लफंगे के कि वह भी क्या याद करता—वह तो कहती हैं कि मुझे पता ही न चला।'

अर्ज़ किया—'मैं उनको समझा दूंगा—आप लोगों को वाकई ग़लत-फ़हमी हुई है।'

मलिक साहब को इस तरह पेंचोताब खाता छोड़कर हम अपने कमरे में चले गए। कपड़े बदलकर हाथ-मुंह धोया और चाय की मेज़ पर जो आए तो मलिक साहब ने ऊँची आवाज़ में फ़रमाया—'लीजिए तशरीफ ले आए हैं आपके साहबज़ादे।'

और अन्दर से बेग़म साहिबा की आवाज़ आई 'शौकत मियाँ, कमाल कर दिया तुमने! आज मोटर के बिना ही चलते बने—और बेटा, कल वाले किस्से की तो मुझको खबर तक न हुई कि जफर ने आकर

तुमसे ऐसी बदतमीज़ी की।'

हमने बड़ी खूबसूरती से हैरतन्दाज का अभिनय करते हुए कहा—'यह आपसे किसने कह दिया कि बदतमीज़ी की उस बेचारे ने !'

मलिक साहब उबल पड़े—'बेचारा''यानी वह बेचारा ! यानी उसको बेचारा कह रहे हो !'

बेगम साहिबा बोलीं—'सचमुच तुम्हारी शराफत की हद है कि तुम बदबख्त को बेचारा कह रहे हो।'

हमने कहा—'साहब, मुझे ताज्जुब है कि आप लोगों की राय उसके बारे में इस कदर खराब है। वह कल निहायत शर्मिन्दगी के साथ मुझसे यही कह रहा था कि इन्सान ठोकरें खाकर कुछ सीखता है। मैंने भी ठोकर खाकर बहुत-कुछ सीखा है और अब मुझको एहसास हो रहा है कि मैंने उनको कितना दुख दिया है।'

मलिक साहब ने गरजकर कहा—क्या कहा'' जफर ने यह कहा ? नामुमकिन, उसका बाप भी कभी ऐसी शरीफाना और इसानों वाला रवैया अख्तियार न कर सकता होगा।'

हमने कहा—'मैं जो आपसे अर्ज कर रहा था बल्कि मैं तो आपसे खुद अर्ज करने वाला था कि बजाय इस फटकार के आप एक बार उसको बुलाकर प्यार से गले लगा लें—'आपको उसमें काफी तबदीली नजर आएगी।'

ग़फूर साहब अब तक तो खामोशी से खड़े चाय की मेज़ पर मक्खियाँ झल रहे थे, लेकिन अब उनसे न रहा गया, कहने लगे—'साहब, अब मैं क्या कहूँ, छोटा मुंह बड़ी बात वाला क़िस्सा है मगर मैंने कल उसकी एक-एक बात खुद अपने कानों सुनी है।'

हमने ग़फूर को टालते हुए कहा—'नहीं, शायद तुमको ग़लतफहमी हुई है।'

बेग़म साहिबा ने मलिक साहब को मुखातिब किया—'मैंने कहा सुनते हो, अगर यह सच कह रहे हैं तो आखिर नुकसान क्या है, जरा उसको बुलाकर अन्दाजा तो किया जाये।'

मलिक साहब ने पहले जैसी बेजारी से कहा 'अजी मैं उससे अच्छी

तरह जानकार हूँ । मेरी समझ में तो यह बात आती नहीं कि वह ऐसा शरीफजादा बन सकता है ।'

हमने कहा —'आप मेरी खातिर एक बार बुलाकर अपने प्यार का उसको यकीन दिला दीजिए और फिर देखिए कि वह कैसा नजर आता है ।'

बेगम साहिबा ने भी जोर दिया —'हाँ-हाँ, इसमें नुकसान ही क्या है । क्या अजब है कि अल्लाह ने नेकी डाल दी हो उसके दिल में !'

मलिक साहब ने फरमाया—'साहब, मैं तो इसको करिश्मा समझूँगा वखुदा मेरा जी नहीं चाहता कि उसको बुलाऊँ मगर आप लोग यही चाहते हैं तो यह भी कर देखूँगा !'

मियाँ गफूर से जब सहन हो सका तो वह चाय की मेज को मक्खियों से लदा छोड़कर कमरे से बाहर चला गया ।

□

सात

हमारी डाक कॉलिज के पते आया करती थी और हम ख़त भी कॉलिज में ही बैठकर लिखा करते थे। मलिक साहब के घर में तो इसकी सम्भावना ही न थी, क्योंकि हम रोज़ाना एक ख़त बीवी को लिखते थे और रोज़ाना उनका भी एक ख़त आता था।

फिर भी डर यह था कि अगर एक ख़त भी पकड़ लिया गया तो मलिक साहब के यहाँ हमारे लिए वह हालत हो सकती थी जो 'सिम-सिम' का नाम भूलकर अलादीन की हुई थी।

हमारा यह उसूल था कि कॉलिज पहुँचते ही दफ़तरी के पास जाते और उससे अपनी डाक लेकर अपने कमरे में आ जाते, और कभी इत्तफ़ाक से बीवी का ख़त न मिला, जिसकी पूरी-पूरी उम्मीद होती थी, तो मालूम यह होता था कि गोया आज का दिन ज़िन्दगी के हिसाब में शामिल नहीं रहा और जी में आता था कि आज बजाय एक के दो ख़त लिखें और अक्सर ऐसा भी किया, क्योंकि असल में दो वजह थी, एक तो यह ख़ुद अपने दिल को ज़रा इत्मीनान हो जाता, दूसरे एक अक्लमन्दी जो कर बैठे थे उसका जुर्माना भी इस सूरत भुगतान पड़ता है।

और हमारी हालत कुछ यूँ है कि—

> पड़ें गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार,
> और अगर मर जायें तो नौहेख्वार कोई न हो।

और यह यकीन दिलाने के बाद जो खातिरदारी हमारी हो रही थी, उसका खुलासा हाल रोज़ का रोज़ लिख देते थे मगर हम यह भूल गये

थे कि बेगम लाख समझदार हो, लाख अक्लमंद हो मगर है आख़िर औरत और इस क़िस्म के मामलात में औरत कुछ बहुत ही औरत बन जाया करती है। इसलिए अगर डाक की गड़बड़, हवाई जहाज़ पर दुर्घटना, पोस्टमैन की ग़लती थी या किसी ऐसे ही अप्रत्याशित कारण से किसी दिन भी हमारा ख़त बीवी को न मिला हो तो वह यह तय कर लेगी कि आज ख़त न आने का मतलब है कि परसों मलिक साहब की साहबज़ादी से निकाह हो गया।

आज जो उस नेकबख्त का ख़त अपने कम्बख्त के नाम आया तो वह कुछ यूँ था—

'सरकार,

कल की हालत कुछ न पूछिये—मगर ख़ुदा का हज़ार-हज़ार शुक्र है कि आज आपका ख़त मिल गया जो आज ही मिलना चाहिए था। इन दोनों ख़तों को पढ़कर अपने ऊपर हँसी आई यानी कल जितने ख़याल आये थे वे सब ख़त्म हो गये मगर आपने अपने दोनों ख़तों में से किसी मे यह नहीं लिखा कि अब तक उन साहबज़ादी की झलक भी नज़र आई या नहीं।

इसका मतलब यह नहीं कि आप ख़ुद ताक-झाँक करने की कोशिश करें बल्कि मेरा ख्याल इस तरफ यूँ गया कि वह मलिक साहब और उनकी बेगम साहिबा जो अपनी साहबज़ादी के लिए इतने यतन करके शौहर ढूँढ रहे हैं बल्कि अपने नज़दीक ढूँढ चुके हैं, यह भी कर सकते हैं कि किसी बहाने से आपको लड़की दिखा दें। बल्कि मुझको ताज्जुब है कि अब तक लड़की दिखाई क्यों नहीं! मेरा ख्याल यह है कि हो न हो, लड़की मे या तो कोई जिस्मानी कमी है या वह बदशक्ल है वरना इस तरह दामाद खरीदने का मतलब ?

सब बातों के अलावा मैं यह ज़रूर कहूँगी कि ख़ुदा के वास्ते आप घर की तलाश में ज़रा भी लापरवाही से काम न लें—जो कुछ भी हो घर फ़ौरन मिलना चाहिए। क्योंकि जबसे आपने उस निगोड़े ज़फर का हाल लिखा है मुझे और भी फ़िक्र पैदा हो गया है कि न जाने यह मुआ मरा क्या कर गुज़रे। भाई, ख़ुदा के लिए आप होटल में चले जाइये—भाड़

में जाये मुए मलिक साहिब और उनका घर और ससुराल जैसी यह खातिरदारी।

आप जल्दी से जल्दी किसी होटल में चले जाइये।

आपका बेटा अच्छा है—आज आपकी तस्वीर देखकर कह रहा था 'अब्बा क् कू फक फक' बातें। करते-करते तस्वीर मुँह पर रखकर सो गया। डर से कहीं आपको याद करते-करते बीमार न हो जाये।

कल आपके खत का फिर इन्तजार करूँगी।

आपकी—'बकलीस'

वाकई औरत चाहे वह हमारी बीवी हो या किसी अल्लाह के बन्दे की बीवी, जब वह अपने औरतपन मे आती है बड़ी दयनीय बन जाती है। अब गोया उसको यह भी डर है कि कहीं हम मलिक साहिब की साहब-जादी की झलक न देख लें।

वाकई हमसे सख्त गलती हुई थी कि हमने साहब को बीवी-बच्चे का किस्सा ही न बताया और ताँगे वाले की सलाह मानकर ऐसा झूठ बोल गये जो अब हमारा जानलेवा बना हुआ था। मगर सवाल तो यह है कि यह न करते तो क्या करते? अब बेगम को क्या मालूम जिस होटल से हम भागे हैं, उसकी मसहरी मे कितने खटमल थे। उस होटल के सालन के एक प्याले में कितने गैलन पानी होता था। उस होटल की रोटी में कितनी रेत होती थी और कितना आटा और उस होटल में रह-कर हमारा वजन कितना घट गया था। वह तनख्वाह जो अब बच रही है सबकी सब उस ताँगे वाले और सिनेमा वालों ने मिलकर बँट गई होती और महीने की आखिरी तरीख में जी चाहने लगता कि चलो किसी की जेब काटें।

कहने का मतलब यह है कि होटल के जोखम में एक नहीं हजारों जोखम हैं और ऐसी बेहूदगियाँ जिनका बयान मुश्किल है।

अब आप ही बताइये कि जिन होटलों मे हंगामा और हा हा हू हू हो वहाँ कहाँ एक शरीफ आदमी शकून के साथ रह सकता है। और उस पर यह कि किराये इतने ज्यादा हैं कि हमारे जैसे आदमी अगर एक महीना वहाँ रहने की सूरत निकाल ले तो कम से कम छः महीने जेल में रहना

पड़े।

एक तरफ इन मुसीबतों को देखिये और दूसरी तरफ यह ख्याल कीजिए कि मलिक साहिब के यहाँ सिवाय ठहरने और ठहरकर दूसरा घर ढूंढने के बाकी हमारी तबीयत ठीक है—मलिक साहब अपने मन मे क्या-क्या समझ बैठे थे, इसकी जिम्मेदारी उन पर थी, इसमें हमारा क्या कसूर। और अब तो हमने ऐसी सूरत भी पैदा कर दी थी कि उनके असल बल्कि ट्रेण्ड दामाद जफर साहब से भी सुलह हो सकती थी, बशर्ते इस सिरफिरे लौंडे को खुदा अक्ल दे दे और वह हमारी नियत पर शक न करे।

लेकिन बीवी के पत्र से हमने काफी नसीहत ली। फिर भी इस सवाल का कोई हल समझ में न आया कि आखिर मलिक साहब के यहाँ से दफा कहाँ हो जायें ?

फिर भी बीवी को समझा-बुझाकर खत लिखा और कसम खाकर वादा किया कि आज से घर की तलाश और तेजी के साथ शुरू कर दी जायेगी और चाहे जैसा भी घर मिल गया हम मिलते ही मलिक साहब के घर से विदा हो जायेंगे।

खत मे ये सब बातें ऊपरी दिल से महज़ बीवी को तसल्ली देने के लिए नहीं लिखी थीं बल्कि वाकई इरादा भी यही था कि यह रोज़ का मलिक साहब के यहाँ से मोटर पर आना और मोटर पर जाना ग़लत है। इस तरह तो हम कयामत तक घर नहीं ढूंढ़ सकते।

इसलिए आज कॉलिज का वक्त खत्म होने से पहले ही यानी मोटर पहुँचने से पहले ही हमने कॉलिज छोड़ दिया। पहले तो सीधे डाकखाने गये—अपने हाथ से खत को पोस्ट किया। इसके बाद इस तरह एक सडक पर चल दिये मानो इसी पर घर हमारी इंतजार में है, जिसकी हमको तलाश है, हालाँकि यह भी पता न था कि यह सड़क किधर जाती है। मगर वह जो किसी ने कहा है कि—

ढूंढने वाले को दुनियाँ भी नयी देते हैं।

दिल ने कहा कि हमारा काम सिर्फ़ तलाश करना है। घर का मिलना या न मिलना यह सब तकदीर के हाथ में है। आज की तलाश

आठ

लहराता हुआ बाग़—चारों तरफ लाल-लाल गुलाब के फूलों की क्यारियाँ फैली हैं—ताजमहल के नक्शे जैसी कोठी। मालूम होता था जैसे किसी बादशाह का महल हो।

इतनी शानदार कोठी—शानशौकत का हर सामान और हम कोठी के एक-एक कमरे को मालिक मकान के साथ देखते फिरते हैं। हम इस कोठी को देखने के लिए आए हुए हैं और वह बुजुर्ग हमें कोठी दिखा रहे हैं।

वह बुजुर्ग कह रहे हैं—'देखिये जनाब, यह गर्म पानी का नल है और यह ठण्डे पानी का।'

अर्ज़ किया—'यह सब कुछ ठीक है मगर अब आप किराया भी बता दीजिए ताकि जो दिल को एक खोज-सी है, वह भी खत्म हो जाये।'

वह बोले—'इसका किराया जो जी चाहे दे दीजिए, दस, बीस पचास जो समझ में आये।'

अर्ज़ किया —'फिर भी कुछ मालूम तो हो। बात यह है कि मैं मामले का बहुत साफ़ आदमी हूँ, आप किराया बता दीजिये।'

बुजुर्ग ने बड़े प्यार के साथ फरमाया—'आप ज्यादा से ज्यादा क्या दे सकते हैं?'

अर्ज़ किया—'साहब, यह बात है कि आपकी इस कोठी और इसके समान का किराया तो खैर मैं अदा कर ही नहीं सकता—यह तो मुझे बस से बाहर नज़र आ रहा है, अलबत्ता मैं ज्यादा से ज्यादा सौ रुपये महीना दे सकता हूँ।'

मुस्कराकर उन बुजुर्ग ने फरमाया—'सौ रुपये ! चलिये मंजूर है, अपना ही घर समझकर रहिए।'

और यह कहकर इतनी जोर से मुझको झंझोड़ दिया कि हम हड़बड़ा कर उठे। आंख खुल गई—न तो वह कोठी थी, न उसका सामान और न कुछ…।

वही मलिक साहब का घर, वही मसहरी और सामने मलिक साहब खड़े है। कह रहे हैं—'अरे मियाँ उठो भी अब ! नौ बज रहे हैं—इतवार का दिन सही, क्या सोते ही रहोगे ! चलो उठो—वह आया हुआ है जफर मैंने उसको बुलाया था मगर बात तुम ही करोगे।'

हम अब अपने ख्वाबगाह से निकलते हुए बाथरूम में पहुँच गये। कितना मीठा ख्वाब था—बिल्ली को ख्वाब में छिछड़े नजर आते ही हैं। ख्वाब में भी घर ही ढूंढ रहे थे वल्लाह…।

बाथरूम से निकलकर मलिक साहब को अपनी इंतजार में पाया। वह देखते ही बोले—'बात यह है कि मै उसको ज्यादा मुंह लगाना नही चाहता और तुम्हारी चाची उससे बात करना चाहती है, इसलिए बात तुम ही करो।'

अर्ज किया—'बहुत अच्छा, मगर वह है कहाँ ?'

मलिक साहब ने फरमाया 'मैं बुलवाता हूँ उसको तुम्हारे नाम से गोया तुम जबरदस्ती मुझसे मिलाओगे—वरना मै तो मिलना नही चाहता समझ गये न ?'

उसी समय ग़फूर चाय लेकर कमरे में दाखिल हुआ तो मलिक साहब ने फरमाया—'देखो ग़फूर ! बाहर वह है जफर, उससे कहो शौकत मियाँ ने सलाम कहा है।'

ग़फूर को भेजने के बाद मलिक साहब गोया फूल सूँघकर बैठ गए और दरवाजे के पीछे बेगम साहिबा भी आ गई कि इतने में जफर कमरे मे दाखिल हुए—हमने उनको देखते ही गर्मजोशी से कहा—'असलाम अलैकुम, तशरीफ रखिये जफर साहब—इधर कुर्सी पर।'

जफर ने मलिक साहब को भी सलाम किया। मगर उन हजरत ने इस तरह मुंह दूसरी तरफ किया गोया कह रहे हों कि हम नहीं देते तेरे

सलाम का जवाब।

हमने कहा—'जफर साहब, कितनी शक्कर डालूँ आपकी प्याली में?'

जफर, जो इस समय कुदरती तौर पर सिटपिटाया हुआ था, घबरा-कर बोला—'जी नहीं···आप ही दीजिए।'

हमने दो चमचे डाल दिये और चाय की प्याली उनकी तरफ बढ़ाते हुए कहा—'भई जफर साहब, मैंने आपको इसलिए तकलीफ दी है और किबला मलिक साहब को बड़ी मुश्किल से राज़ी किया है जो नागवार किस्म की ग़लतफ़हमी बनी हुई है उसको बीच से हटाया जाये।'

जफर तो हैरान होकर कभी हमको और कभी मलिक साहब को देख रहा था और मलिक साहब चुप बैठे थे नथुने फुलाए और निगाहें फेरे हुए।

इतने में दरवाज़े की आड़ से आवाज आई—'शौकत मियाँ तुमको नहीं मालूम कि मैंने जफर को हमेशा क्या समझा? उसके कभी फाँस लगी तो मेरा दिल तड़प उठा। उसके लिए रात को रात और दिन को दिन न समझा, मगर उसने हमको जो बदला दिया उसको उसका दिल खूब जानता है।'

मलिक साहब ने 'ग़ालिब' का शेर इस तरह पढ़ा जैसे खुद आप ही का हो—

क्या किसी का गिला करे कोई?

हमने कहा—'नहीं साहब, यह ग़लत है। क्या इस वक्त जफर मियाँ की यह खामोशी इस बात का सबूत नहीं है कि शर्मिन्दगी ने उनके होंठ सी रखे हैं। यह आप दोनो से दूर होकर सब कुछ खो चुके हैं और जो कुछ खोया है अब इसको दुबारा हासिल करेंगे।'

मलिक साहब ने जलकर कहा—'मियाँ, यह तो वही मिसाल है कि मुद्दई सुस्त और गवाह चुस्त। तुम इन साहबज़ादे की ज़ुबान बने हुए हो। सवाल यह है कि इन हज़रत से यह पूछो कि क्या मुझको इनसे यही उम्मीद होनी चाहिए थी जो यह साबित हुए हैं?'

हमने कहा—'माफ कीजियेगा किबला, मेरे ख्याल में यह तरीका ग़लत है- जो कुछ हो चुका है उसको दोहराना फिजूल है।'

बेगम साहिबा की आवाज आई—'ऐ बेटा ! हम लोगों के लिए इनसे बढ़कर और कौन हो सकता है। अगर यह अब भी संभल जायें तो मैं समझूं कि सुबह का भूला शाम को घर लौट आया।'

मलिक साहब ने फरमाया—'तुम समझो मगर मैं यह नहीं समझता। मुझको भी कहावतें याद हैं और मैं यह भी कह सकता हूं कि दूध का जला छाछ फूंक-फूंक कर पीता है—समझे···!'

हमने कहा—'खैर, आपको आइन्दा जफर साहब से शिकायत न होगी। जफर साहब, अब आप खुद मलिक साहब को इतमीनान दिलाइये।'

उस बेवकूफ ने बड़े गधेपन से कहा—'अब मैं क्या कहूँ—आप तो कह चुके हैं।'

हमने कहा—'बेशक ! इस वक्त आपसे रस्मी बातों की उम्मीद ही फिजूल है, मगर मुझको उम्मीद है आप आइन्दा कम-से-कम इस बात का खयाल रखिएगा कि इन बुजुर्गों के दिलों को ठेस न लगने पाये—आप समझ गये न !'

मलिक साहब ने खुश होकर कहा—'आहा, क्या बात कही है—सुभानअल्लाह ! देख लीजिए बरखुरदार, यह है न बात, इसको बात करना कहते हैं।'

हमने कहा—'अच्छा, अब मेरी अर्ज यह है कि आप जफर मियाँ को प्यार से गले लगा लीजिए और अपने साथ अन्दर ले जाइये···यह वाकई बहुत शर्मिन्दा हैं।'

और हमने आँख से जफर को भी इशारा किया कि वह उठे—शुक्र है कि वह इशारे को समझकर उठे और इधर से मलिक साहब ने बढ़कर गले लगाते हुए कहा—'बेटा तुम्हारे लिए हमारे पास सिवाय मुहब्बत के और है ही क्या ?'

यह वह दृश्य था कि आंखें भी नम हो गईं। मगर आश्चर्य है कि जफर पर किसी किस्म का कोई असर न था; क्योंकि इस तरह के बेहूदे लोग प्रभावित कभी नहीं होते, हाँ संदिग्ध जरूर हो जाते हैं कि जो कुछ हो रहा है, क्यों है और इसका क्या मतलब हो सकता है ?

कुछ ऐसी ही मुसीबत में फँसे जफर साहब मलिक साहब के साथ घर में चले गये। □

नौ

ज़फर के आ जाने और पूरी तरह सुलह-सफाई हो जाने के बाद हमने एक बार फिर कोशिश की कि मलिक साहब हमको हँसी-खुशी से विदा कर दें और इजाज़त दे दें कि हम कॉलिज के क़रीब किसी होटल में रहें। मगर तोबा कीजिए। मलिक साहब ने तो मानो सत्याग्रह शुरू कर दिया। नाराज़ हो गए, बच्चों की तरह मचल गए—औरतों की तरह फूल गए और लीडरों की तरह भूख-हड़ताल की धमकी देकर उस वक्त तक व्रत नहीं तोड़ा जब तक हमसे कहलवा नहीं लिया कि हम इस तरह का सवाल आइन्दा कभी न करेंगे। बल्कि एक बार तो यहाँ तक हुआ कि हमने कॉलिज के अधिकारियों को इस बात पर राज़ी कर लिया कि वह हमको कॉलिज के होस्टल का सुपरिन्टेंडेंट बनाएँ और जब यह तय हो गया तो सचमुच इन बड़े मियाँ ने ज़मीन व आसमान एक कर दिया—नाश्ता छोड़ दिया, एक-एक को काटने दौड़ने लगे।

यहाँ तक कि बेगम साहिबा ने गोया अपने सुहाग की हमसे भीख माँगी और आखिर हमको यह मौका हाथ से छोड़ना ही पड़ा और यह तय कर लिया कि अब चाहे कुछ भी हो रहना यहीं पड़ेगा।

मगर अब मुसीबत यह थी कि ज़फर साहब का हर वक्त का साथ था। उनको हमारे साथ का दूसरा कमरा मिल गया था और वह हज़रत एक स्थायी मुसीबत बने हुए थे। उनके साथ रहने और चौबीस घण्टे वास्ता पड़ने के बाद अन्दाज़ हुआ कि वाकई मलिक साहब कितने ऊँचे इन्सान हैं जो गधे से निबाह रहे हैं। बल्कि अपनी सुन्दर बेटी को इस

के साथ तबाह करने का इरादा किए बैठे हैं

साहब, इस तरह का चुग़द तो न देखा न सुना, जाहिल तो वह खैर था ही, साथ-ही-साथ ऊँचे दर्जे का बदतमीज़ और निहायत घटिया किस्म का इन्सान भी था। अजीब-अजीब शौक थे इन साहब के, मिसाल के तौर पर पहलवानी का शौक बुरा नहीं है बशर्ते इसका सम्बन्ध सिर्फ़ तन्दुरुस्ती ठीक रखने, जिस्म को बनाने और कसरत की हद तक हो मगर वहाँ इस पर्दे में भी गुण्डापन मौजूद था जो इन हज़रत की आदत बन चुका था।

और देखिये - आप शायर भी थे। जी हाँ, शायरी का शौक फरमाते थे—बुलबुल कहते थे आपको। आजकल किसी बड़े से बड़े चिड़ीमार ने ऐसा बेहूदा नाम न रखा होगा अपना। खैर, हमारी बला से वह शायर होते या न होते हमसे क्या मतलब। मगर मुसीबत तो यही है कि मतलब था और मतलब रखना पड़ता था।

जब देखिये तशरीफ ले आ रहे हैं एक पर्चा हाथ में लिए हुए कहा—

'भाई जान, रात को एक ग़ज़ल हो गई है ज़रा फड़कती हुई, बात यह है कि कल मैं सिनेमा देखने चला गया था, वहाँ यह ग़ज़ल सुनी—'नजर कुछ आज ऐसा आ रहा है।' बस उसी पर कुछ शेर लिखे हैं।'

अब या तो वह ग़ज़ल सुनिये, जिसको सुनकर तबीयत का खून हो वरना ज़ाहिर है कि वह पहलवान भी हैं, और दरिया में रहकर मगर-मच्छ से बैर नहीं बाँधा जा सकता। इसलिए सीने पर पत्थर रखकर सुनना ही पड़ता है।

अर्ज़ किया—'खूब-खूब! तो गोया इसी बहाने ग़ज़ल हो गई, भई जरूर सुनाइए!'

जफर साहब ने खाँसकर गला साफ़ किया और बड़े बाजारी अन्दाज से शुरू हो गए—'अर्ज़ किया है—

जो आँचल उसका ढलका जा रहा है।
तो वह काफिर हसीं शरमा रहा है।'

उनका शेर सुनकर मितली आने लगी—दिल कह रहा था लाहौल बिला कुव्वत''' फिर भी मुँह से कहा—'भई, सुभानअल्लाह! क्या बात है!'

कहने लगे—'जी हाँ, और लोगों ने भी इसको काफी पसन्द किया है। तो लीजिए दूसरा शेर सुनिये—

वह ग़ैरों का गलोरी पर गलोरी
हमें यूं भी जलाया जा रहा है।'

हमने सीने पर पत्थर रखकर इन शेरों की दाद दी बल्कि यूं कि मजबूर थे वरना जी में तो आया कि कसकर तमाचा उसके गाल पर जड़ दें।

सारांश यह कि हमने चाहे इनकी मलिक साहब से सुलह तो करा दी मगर अब हमारा नाक में दम है। न पढ़ने देते हैं और न लिखने देते हैं।

इस पर गजब यह कि मलिक साहब ने इस हजरत को सलाह दी थी कि अगर आदमी बनना चाहते हो तो शौकत मियाँ के पास बैठा करो। इसलिए यह हजरत मलिक साहब की सलाह के मुताबिक हमारे आस-पास ही मँडराते रहते है। और हम न कुछ पढ सकते थे, न कुछ लिखने की नौबत आती थी। वह डायरी, जो हम बिना देर के रोज़ाना लिखा करते थे, अब कभी-कभी लिखी जाने लगी। आज की डायरी कल लिख रहे हैं। जितना लिखना चाहते हैं उससे थोड़ा लिख रहे हैं—जब रात को दुनिया सो रही है और हम लिखने बैठे अपनी डायरी कि आज की तारीख डालें तो इतमीनान से सोएँ कि एकदम से चिक उठाकर बोले—अख्खाह ! इस वक्त भी कुछ लिखा जा रहा है ! कमाल करते हैं आप भी···यह क्या लिखा जा रहा है?'

अर्ज किया—'कुछ नहीं, यूँ ही एक याददाश्त लिख रहा था।'

कहने लगे—'अजी, इससे तो कोई नावल लिखिए आप। मेरा भी इरादा हो रहा है एक नावल लिखने का। मैंने तय कर लिया है नाम 'तीरे नजर'। क्या राय है आपकी?'

जी चाहा कि डायरी खींचकर इन हजरत के मुँह पर मारूँ मगर इन्सान वह कर नहीं सकता जो चाहता है। जो उसको करना पड़ता है वही इस वक्त किया, सो कहा—'नाम तो बड़ा अच्छा है।'

वह बात बोला 'एक और भी बडा बेढब नाम समझ में

आया है 'चंचल दिल'। मेरे ख्याल में इस पर आप लिख डालिए।'

हमने सिर्फ इतना ही कहा—'अजी मुझे कहाँ आता है नावल लिखना।'

वह चमककर बोले—'यह कौन-सी बड़ी बात है। मैं आपको बताऊँगा कि इसमें आप क्या लिखें—कोई मुश्किल काम थोड़ा है नावल लिखना, मैं आपको दिखाऊँगा अपना वह नावल जो मैं लिख चुका हूँ। उसका नाम मैंने बड़ा लाजवाब रखा है—'दिल का सौदा' उर्फ 'मोल-तोल' और किस्सा इसका यह है कि एक शाहजादा है जो एक लड़की से इश्क़...'

और साहब, इसके बाद से जो उन्होंने यह बेहूदी कहानी शुरू की तो बस रुकने का नाम ही नहीं लिया। हमारा सर दुखने लगा।

जब यह हज़रत रात को दो बजे के करीब दिमाग़ में हल चलाकर तशरीफ़ ले गए तो अपनी बेबसी पर रोने को जी चाहता था।

□

दस

ग़फ़ूर मियाँ पहले तो कुछ दिन तक सख़्त नाराज़ रहे मगर जिस तरह नालायक औलाद को भी माँ-बाप छोड़ नहीं सकते उसी तरह अब वह हमसे जुड़े हुए तो थे, मगर कुछ खिंचे-खिंचे से। उनकी निगाहों से शिकायतें बरसती थीं मगर ज़ुबान से कुछ न कह सकते थे। जानते थे कि हम ऐसे बेवकूफ़ हैं जो उनकी सलाहों पर न चलेंगे। जाफ़र जैसे आस्तीन के साँप को अपने पास बुला लिया—मलिक साहब से उनकी सफ़ाई करा दी और इस घर में फिर वही मुसीबत मँगवा ली जिससे ख़ुदा-ख़ुदा करके घर वालों को छुटकारा मिला था।

यह शिकायत कुछ ऐसी-वैसी न थी कि ग़फ़ूर मियाँ आसानी से इसको भुला देते और हमको माफ़ कर देते मगर बेचारे अपने पितृस्नेह से विवश थे।

आख़िर एक दिन हमने उनकी निगाहों की शिकायतों की ताब न लाकर अकेलेपन का फ़ायदा उठाते हुए उनसे कहा—'भई ग़फ़ूर, तुम मुझसे बहुत ख़फ़ा हो?'

ग़फ़ूर शायद इसी बात की इन्तज़ार में थे, कमरे की झाड़-पोंछ छोड़ कर झाड़न कंधे पर डालते हुए बोले—'अरे साहब, हम क्या और हमारी नाराज़गी क्या? नौकर हैं आपके, मालिकों से क्या मजाल है कि नाराज़ हों।'

हमने कहा—'चूँकि तुम्हारी इस नाराज़गी में बला की शराफ़त है, इसलिए मैं तुमको खड़ा न रहने दूँगा।'

ग़फ़ूर ने पास आकर पहले तो इधर-उधर देखा फिर ज़रा धीमी

आवाज़ में कहा—'खुदा न करे हजूर को इस बूढ़े की बात की सच्चाई का अन्दाज़ा करना पड़े। मगर आपने जिस सँपोले को पाला है वही आप पर फन उठायेगा।'

हमने ग़फ़ूर को समझाते हुए कहा—'देखो न ग़फ़ूर ! फन तो वह तब उठाये जब मैं रास्ते में आऊँ—जब ऐसा करूँगा ही नहीं तो यह सवाल ही नहीं पैदा होता।'

ग़फ़ूर ने कहा—'सालभर की थी ग़ज़ाला बीबी जबसे मैं इस ड्योढ़ी आया हूँ। मैंने उनको गोद में खिलाया है, उनसे अपनी दाढ़ी नुचवाई है। दिनभर मेरे साथ रहती थी और आज तक मुझसे परदा नही करतीं—बाबा कहती हैं मुझको। मेरी आँखों में खाक खिला हुआ गुलाब का फूल है—इस घर का कारखाना उसी के दम से चल रहा है। हीरा है हीरा। और इस हीरे को पत्थर से तोड़ा जा रहा है। जितने दिन यह साहबज़ादे बाहर रहे मेरी ग़ज़ाला बीबी खुश रहीं और जिस दिन से यह फिर आ गए हैं वह बेचारी गुमसुम-सी हो गई हैं।'

हमने सब कुछ समझते हुए जान-बूझकर कहा—'मगर इसकी वजह क्या है ? आख़िर कौन-सी कमी है ज़फर मियाँ में ?'

ग़फ़ूर मियाँ ने एकदम झल्लाकर कहा—'ऐ हजूर, यह कहिये कि कौन-सा ऐब नहीं है। पढ़े न लिखे, लट्ठ-लफंगों की सगत, शराब तक मुँह को लगी हुई है। कौन-सा शोहदापन है जो इन साहबज़ादे ने उठा रखा हो। इस घर में कोई काले सर वाली अन्ना, आया, नौकरानी उनकी वजह से नहीं रखी जा सकती। पड़ोस की बहू-बेटियों को इस जंगली से इस तरह छिपाया जाता है जैसे यह सचमुच कोई भेड़िया हो। जो दोस्त हैं इनके उनका हाल आप देख ही रहे हैं। वह तो कहिये कि भूरे खान आजकल जेल में हैं वरना वह थे इनके वज़ीरे आज़म।'

हमने रौब से पूछा—'भूरे खान ! वह कौन था ?'

ग़फ़ूर ने कहा—'वह किसी तवायफ का भाई था, इन साहब को तबला सिखाने आया करता था—उसी ने तो इनका नाश मारा है और ग़ज़ाला बीबी को इन सब बातों की रत्ती-रत्ती खबर है।'

हमने कहा—'मेरा ख्याल है कि शादी हो जाएगी तो ज़फर मियाँ

ठीक हो जाएँगे।'

ग़फ़ूर ने कानों पर हाथ रखकर कहा—'तोबा कीजिए सरकार! वह ठीक हों, मगर यह मासूम कली तो घुल-घुलकर खत्म हो जाएगी। उसको तो जैसे नफरत है इन साहबज़ादे से। नाम आया और फूल-सा चेहरा मुर्झा गया। कल का किस्सा सुनाऊँ—ऊन का गुच्छा और तीलियाँ लिये कुछ बुन रही थीं। मैंने पूछा क्या है? बीबी ने कहा स्वेटर बुन रही हूँ। मैं समझा जफर के लिए बुन रही है। मगर कहने लगीं—शौकत साहब के लिए बुन रही हूँ बाबा!'

हमने चौंकते हुए कहा—'क्या कहा, मेरे लिए? यानी मेरे लिए बुन रही हैं स्वेटर···'

ग़फ़ूर ने कहा—'यही तो रोना है कि कैसा अच्छा संजोग हो सकता है यह, और आप हैं कि घेर-घेर कर इस काँटे को अपने रास्ते में लाते हैं जो यहाँ सबकी आँखों में खटक रहा है।'

अब हम ग़फ़ूर से कैसे कह देते कि हम बिकाऊ नहीं हैं बल्कि मुद्दत हुई बिक चुके हैं और ग़फ़ूर थे कि मौके से फायदा उठाकर कहते चले जा रहे थे, 'सरकार, उनका तो हाल यह है कि आप इधर बाहर गए और वह आपके कमरे में आ गईं। इस कमरे की सफाई की और आपकी चीजों को ठीक से रखा। यह उनका सबसे प्यारा काम है। एक-एक कपड़ा देखती हैं, किसी के बटन तो नहीं टूटे—आपकी हर चीज ठीक मिलती है—क्या आप इसको मेरा काम समझते हैं?'

और वाकई हम इसको ग़फ़ूर ही का काम समझते थे। मगर ग़फ़ूर के इस बयान से मालूम हुआ कि ग़लतफहमी जड़ें पकड़ती जा रही है और बेचारी ग़ज़ाला अपनी कल्पना में एक ऐसा संसार बसाये बैठी है जो कभी वास्तविक नहीं हो सकता। जरूरत इसकी है कि जल्दी से जल्दी इस ग़लतफहमी को दूर किया जाए।

मगर कोई तरकीब ऐसी नजर न आती थी। झूठ बोलने के बाद अब यह आसान न था कि एकदम सच बोल दें और मलिक साहब को यह बता दिया जाए कि हम विवाहित हैं और औलाद वाले भी।

ग़फ़ूर मियाँ शायद हमें प्रभावित हुआ समझकर कहने लगे—इन

सफेद बालों की कसम सरकार ! ग़ज़ाला बीबी इस वक्त ज़िन्दगी और मौत की पगडण्डी पर चल रही हैं। मौत है उनके लिए ज़फर मियाँ और ज़िन्दगी आप दे सकते हैं।'

हमने चौंककर कहा—'तो ग़ज़ाला ने यह तुमसे कहा है ?'

ग़फूर ने दाँतों में उँगली दबाकर कहा—'तोबा कीजिए, वह भला क्या कहेंगी, मगर उनकी निगाहें यही कहती हैं।'

हम कुछ कहना ही चाहते थे कि ज़फर आ धमके, और यह बात खत्म हो गई। ग़फूर भी उसको घूरता हुआ कंधे पर झाड़न सम्हालता बाहर निकल गया।

ज़फर साहब ग़फूर के जाने के बाद कुर्सी हमारे करीब खिसकाकर बड़े राज़दाराना अन्दाज़ में बोले—'भाई साहब, आज की बात आपसे अर्ज़ करनी थी। बात यह है कि यह तो आप जानते है कि यह जवानी दीवानी होती है—बड़ा बेहूदा ज़माना होता है यह, आदमी हर तरफ बहक सकता है और दिल पर ज़रा मुश्किल ही से काबू रहता है इन्सान को। और आप की कसम, मैं अब बिल्कुल ही नहीं चाहता कि किसी तरफ बहकूँ—ऐसी सूरत में आप मलिक साहब को सलाह क्यों नहीं देते कि भाई, अगर शादी करनी ही है तो इस नेक काम में देर करने की क्या ज़रूरत। मेरा मतलब है कि वह यह तय ही कर चुके हैं कि मुझको गुलामी में लेंगे फिर आखिर इन्तजार किस बात का है ? जवान लड़की को घर में बैठाये रखने से फायदा ही क्या है, और तुमको आखिर कब तक आज़मायेंगे। बल्कि मेरी तरफ से कह दीजिएगा कि ···।'

'अब और क्या चाहता है ज़ालिम, तेरे इशारों पर चल रहे हैं।'

'घर की घर में शादी होनी है, न दहेज की फिक्र, न कहीं लड़की को भेजना है। फिर आख़िर देर क्यों की जा रही है ?'

हमने कहा—'सवाल यह है कि जब आपको खुद मालूम है कि यह बात होकर रहेगी तो फिर यह ठीक होगा कि आपकी तरफ से तकाज़ा किया जाये।'

ज़फर ने कहा—'भैया, सच्ची बात है कि शादी के बाद शैतान फिर इस तरह से घेरेगा जिस तरह अब घेरता है। मैं चाहता हूँ जो कुछ हो

चुका बहुत हुआ मगर अब आदमियत के साथ रहूँ।'

हमने ग़फ़ूर की बातों और इसकी बातों की रोशनी में फ़िलहाल एक नतीजा निकाला कि वाक़ई मलिक साहब पर ज़ोर डालना चाहिए कि वह शादी में देर न करें—हालाँकि यह ग़ज़ाला पर ज़ुल्म था मगर इससे बड़ा ज़ुल्म यह था कि वह इस ग़लतफ़हमी का स्थायी तौर पर शिकार रहे, जिसमें वह अब है।

□

ग्यारह

आज हम जब डायरी की आख़िरी लाइनें लिख रहे थे कि मलिक साहब का हुक्म लेकर मियाँ ग़फ़ूर दाख़िल हुए—मलिक साहब जब ज़रा काफ़ी देर के लिए हमारे पास बैठने आया करते है, तो पहले उनका हुक्का आता है। इसलिए आज भी हम समझ गये कि ज़रा महफिल जमेगी। मलिक साहब ने आते ही अस्सलाम अलैकुम का नारा लगाया और करीब ही एक कुर्सी पर बैठकर बोले—'कहिए मौलाना, क्या हो रहा था? वही लिखना-पढ़ना हो रहा होगा? किताबों के तुम कीड़े हो—मियाँ, कभी कमरे से निकल कर बाग़ में टहला-बहला भी करो, कभी सिनेमा चले जाया करो, कभी दोस्तों-यारों को ज़रा बुला लिया''तुम तो अजीब अदमी हो। कॉलिज में दिन-भर सर खपाना, फिर घर आकर यह दिमाग़-सोज़ी।'

अर्ज़ किया—'कॉलिज में इस किस्म की तफरीहें आये दिन हुआ करती हैं। रह गया यह फ़ुरसत का वक्त, इसको इन्सान उसी शौक में ख़र्च करता है जो उसको सबसे ज्यादा प्रिय हो और मेरा शौक यही लिखना-पढ़ना है।'

कहने लगे—'अच्छा बाबा! लिखा खूब और पढा खूब। मैं तो इस वक्त ज़रा इस ख़्याल से आया था कि तुमसे ज़रा सलाह करूँगा कुछ—बात यह है कि तुमको यह तो मालूम ही है कि मेरी एक ही बच्ची है, ख़ुदा उसकी उम्र में बरकत दे। सोचा यह था कि ज़फर ढंग का निकल आयेगा तो सब कुछ उसके हवाले करके अल्लाह की याद में कुछ दिन बसर करेंगे मगर वह सब कुछ नहीं हो सकता जो इन्सान चाहता है

मुकद्दर से वह भी ऐसे निकले हैं जैसे नजर आ रहे हैं।'

दरवाजे के पीछे से अवाज आई—'तोबा है तुमसे भी... अब तुम वही किस्सा सुनाने बैठ गये। मतलब की बात क्यों नहीं कहते?'

बेगम साहिबा की आवाज सुनकर हमने सलाम करके दुआएँ वसूल कीं तो मलिक साहब ने फरमाया—'भाई, किस्सा दरअसल यह है कि बेगम साहिबा बराबर हज का इरादा कर रही हैं और तीन-चार रोज से तो हर वक्त यही जिक्र है। आखिर मैंने उनसे कह दिया कि शौकत मियाँ के सामने यह किस्सा रखे देता हूँ, जो उनका फैसला होगा वही ठीक है।'

बेगम साहिबा ने अन्दर से ही फरमाया—'मियाँ, मेरी सुनो! भैया, जिन्दगी का क्या एतबार! आज मरे कल दूसरा दिन। उम्र-भर की एक तमन्ना यही थी कि यह फर्ज भी पूरा हो जाता और यह जिन्दगी का मकसद पूरा हो सकता।'

हमने कहा—'ठीक है। बड़ा मुबारक इरादा है और मैं हर तरह हाज़िर हूँ। मगर एक बात मैं यह अर्ज़ कर दूँ कि जब तक आप गज़ाला की शादी के फर्ज से न निपट जायें हज की शर्त पूरी नहीं कर सकतीं।'

मलिक साहब ने मानों एकदम याद करते हुए कहा—'हाँ, ठीक है। यह मैंने भी कहीं पढ़ा है।'

बेगम साहिबा ने कहा—'ऐ बेटा, तो इस शर्त के पूरा होने का कब तक इन्तजार कर सकती हूँ...गज़ाला को मैं अपने साथ ले जाऊँगी न...'

हमने कहा—'ठीक है मगर इस तरह यह शर्त पूरी नहीं होती, अलबत्ता अगर आप बुरा न मानें तो मैं अर्ज़ करूँ कि आख़िर आप पहले इस फर्ज से क्यों नहीं निबट लेते?'

बेगम साहिबा ने कहा—'ऐ मियाँ, कैसे निबट जाऊँ—जान-बूझकर ऐसी बात करते हो तुम?'

मलिक साहब ने कहा—'पहले सुन लो इनकी तजवीज। हाँ जी तुम कहो।'

हमने कहा—'साहब, लड़का घर में मौजूद है। अल्लाह का नाम लेकर पढ़ा दीजिये दो बोल। अब आप यह कहेंगे कि लड़के के तरीक़े

पर आपको भरोसा नहीं है, मगर मेरा ख़्याल है कि जफर मियाँ को न आप ठीक कर सकते हैं न मैं,—बल्कि सिर्फ बीबी यह काम कर सकती हैं—यह काम ग़ज़ाला बीबी पर छोड़ दीजिये।'

बेगम साहिबा बोलीं—'जीते रहो मियाँ, यही मैं भी इनसे कहती हूँ और दिन-रात समझाती हूँ। मगर किसी तरह इनके दिमाग़ में यह बात नहीं आती।'

मलिक साहब ने फरमाया—'कहाँ आ सकती है ऐसी औंधी बात मेरे दिमाग़ में। साहब, मैं उन साहबज़ादे के तौर-तरीकों को दिन-रात देख रहा हूँ। एक-से-एक उल्लू का पट्ठा उनको दिन-रात घेरे रहता है। लाख चाहता हूँ कि यह आदमियत के जामे में आ जाये मगर कुत्ते की दुम को जब नलकी से निकालकर देखता हूँ तो टेढी ही मिलती है। कल ही मैंने देखा कि एक लफंगे के साथ लँगोट बाँधकर कुश्ती लड़ रहे हैं।'

हमने कहा—'यह तो कोई बुरी बात नहीं है, शादी के बाद इन फिजूल बातों की फुरसत ही न मिलेगी और मैं तो इसका कायल हूँ कि आप या तो जफर मियाँ का ख्याल ही दिल से निकाल दें या उनकी शादी कर दें। शादी के बाद खुद ही सँभल जायेगा।'

बेगम साहिबा ने कहा—'तो ग़ज़ाला का मुकद्दर। तकदीर के लिखे को कौन मिटा सकता है? किस्मत वाली है तो उसी को ठीक कर लेगी नहीं तो कोई कुछ नहीं कर सकता।'

मलिक साहब ने कहा—'वही मसल है कि तबीयत इधर नहीं आती।'

बेगम साहिबा ने कहा—'अब यह तुम्हारी धाँधली है कि अन्दर से यह कहकर आये थे कि जो कुछ शौकत मियाँ तय कर देंगे वह मुझको मंजूर होगा और अब कह रहे हैं कि तबीयत इधर नहीं आती।'

मलिक साहब ने कहा—'तो गोया आपका ख्याल यह है कि मैं इन्हीं हजरत के हाथ में बग़ैर सोचे-समझे ग़ज़ाला का हाथ दे दूँ?'

हमने कहा—'बग़ैर कुछ सोचे-समझे। अगर आप उनको इसी ख्याल से अपने यहाँ रखे हुए हैं और उनको मालूम है कि आप उनको अपना दामाद बनाने वाले हैं बल्कि सारी दुनिया को यह बात मालूम है तो अब सोचने-समझने का क्या सवाल! अल्लाह का नाम लेकर पढ दीजिये

निकाह ।'

मलिक साहब ने फरमाया—'मुमकिन है कि मेरी ही बूढ़ी अकल में यह बात न आ रही हो, मगर कयामत के दिन गज़ाला मेरा गिरेबान तो न पकड़ेगी कि मुझ बेज़ुबान के साथ आपने यह क्या सलूक किया ।'

हमने कहा—'मैंने ग़ज़ाला को देखा नहीं, उससे कभी बात नहीं की, मगर इसके बावजूद मुझे उस पर इतना भरोसा ज़रूर है कि वह अपनी किस्मत का ज़िम्मेदार आपको नहीं ठहरा सकती । दूसरे, मेरे ख्याल में उसमें इतनी समझदारी ज़रूर है कि वह इन्हीं ज़फर मियाँ को, जिसकी तरफ से आप इस कदर निराश हैं, सीधा कर लेगी और यह आप भी देखेंगे ।'

बेगम साहिबा ने कहा—'मैं खुद इनसे यही कहती हूँ, मगर इनकी समझ में तो हमेशा का ही फेर है । अक्ल की बात तो समझ में नहीं आती ।'

मलिक साहब ने कहा—'साहब, मैं ज़फर की इस सुधार की बात का कायल हो सकता हूँ । मगर उसके स्वभाव में जो गिराव है और उसमें जो घटियापन है उसका सुधार दुनिया की कोई ताकत नहीं कर सकती ।'

बात मलिक साहब ने बिल्कुल ठीक कही थी । मगर हम कैसे कह देते कि आप ठीक कह रहे हैं ।

हमने कहा—'तो फिर इस ख्याल ही को छोड़ दीजिए । मेरी तो समझ में नहीं आता कि आपने दामाद के लिए स्तर क्या कायम कर रखा है ?'

आँखों में आँखें डालकर बोले—'स्तर''मालूम करना चाहते हैं । बताऊँ मैं तुमको अपना स्तर ! मेरा स्तर है कि मैं ग़ज़ाला के लिए शौकत जैसा दूल्हा चाहता हूँ—ढूंढ़ तो दो कोई मुझे अपना-सा !'

बेगम साहिबा ने हँसकर कहा—'बस दिन-रात यही रट है । यही बात कि—

'मुझको तो तू पसन्द है अपनी नजर को क्या कहूँ ।'

हम थोडी देर तक तो सन्नाटे में रहे- इसके बाद कहा—'काश. ऐसा

हो सकता। ग़ज़ाला मेरी बहन है और मेरी राय यही है कि आप या तो जफर पर नहीं तो ग़ज़ाला की किस्मत पर भरोसा करें, वरना इस ख्याल को हमेशा के लिए छोड़ दें।'

हमने देखा कि हमारे उत्तर पर मलिक साहब सन्नाटे में आ गये और आखिर बुझी हुई आवाज में बेगम साहिबा को सम्बोधित करते हुए बोले—'अगर जफर ही के साथ इसका जोड़ लिखा जा चुका है तो तुम और हम कुछ भी नहीं कर सकते—करो शादी की तैयारी और मुकर्रर करो तारीख...।'

बारह
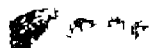
आज रात को हर तरफ से इतमीनान करने के बाद जब डायरी लिखने के लिए हमने डायरी को खोला तो कलम हाथ से कूद पड़ी—जहाँ तक डायरी लिख चुके थे उससे आगे किसी ने बड़ी सुन्दर लिखावट से पत्र लिखा था—

आज मुझको अपनी डायरी मे खुद ग़ज़ाला की तहरीर मिली, जिसने इन शब्दों के साथ मेरी डायरी को पूरा कर दिया था—'आपको इस बात का पूरा हक़ था कि मेरे माँ-बाप की सरल प्रकृति से बराबर खेलते रहते, मेरी माँ के प्यार को खिलौना बनाये रखते, मगर इसका हक़ आपको बिलकुल नहीं है कि एक युवती की कल्पनाओं में आकर पहले उसके मन पर कब्जा करते और फिर उसे जीती-जागती मौत के सुपुर्द कर देने की सलाह देकर खुद अपना दामन बचा जाते।'

'मुझे अब तक मालूम न था कि आप कौन हैं—क्या हैं और मैं ख्वामख्वाह आपकी तरफ क्यों खिंचने लगी हूँ, मगर आपने मेरे माँ-बाप को जो सलाह दी उसने पहले तो मुझे पशोपेश में डाला और फिर जब कि इत्तफाक से आपकी यह डायरी मेरी नजर से गुजर गई है, मैं हैरान हूँ कि आप जैसा ऊँचा इंसान अपने एक छोटे-से मतलब के लिए इतना घटिया खेल कैसे खेल सकता है ?

'काश, आपको मालूम होता कि मासूम और बेज़ुबान लड़कियाँ जब दिल ही दिल में किसी को अपना बना लिया करती हैं तो उनको अपनी किस्मत पर इतना नाज़ होता है'''अब मैं अपनी नजरों से खु़द इतनी गिर चुकी हूँ कि अपने को वाकई ज़फर के काबिल पाती हूँ। अब मैं खु़द

अपने से बदला लूँगी, अपनी जिन्दगी से बदला लूँगी और जब मेरे-माँ बाप मुझे ज़फ़र के हवाले करेंगे तो मैं खुश हूँगी कि वही ज़फ़र, जिसकी कल्पना मुझको हराम मौत पर उभारा करती थी, अब मेरे लिए जीती-जागती मौत बन रहा है। और अब आप ले जायेंगे मेरे इस ख़त को और दिखाएँगे अपने दोस्तों को, अपनी बेग़म को और नाज़ करेंगे कि आपने एक मासूम लड़की का शिकार इस तरह खेला है—एक बेज़ुबान चिड़िया पर वह निशाना बाँधा है कि वह गिर कर फड़फड़ा नहीं सकी।

मैं आपको इस कामयाबी पर बधाई देती हूँ।

—ग़ज़ाला'

इस खत को पढ़कर जो एक ग़ैरतदार आदमी का हाल हो सकता है वह जाहिर है मगर अपना तो यह हाल था कि सन्नाटे में आये हुए जाने कब तक उस कुर्सी पर बैठे रहे।

सिर्फ़ घड़ी की टिकटिक हमारे दिल की धड़कनों का साथ दे रही थी कि एकाएक किसी ने कंधे पर हाथ रख कर कहा—'बात क्या है आखिर सरकार?'

और हमने चौंककर देखा तो ग़फ़ूर कुछ निश्चिन्त-सा खड़ा है।

हमने कहा—'क्या है ग़फ़ूर?'

ग़फ़ूर ने कहा—'तीन चार बार आप से पूछ चुका हूँ कि आज इतने सबेरे क्यों उठ बैठे—आप बोले ही नहीं तो मैं कुछ घबड़ा गया!'

सवेरा हो चुका था और ग़फ़ूर बिस्तर की चाय लेकर आया था, हमने चाय की प्याली ज़हरमार करने के बाद ग़फ़ूर से कहा—'जरा एक जरूरी काम से अब तक जागा हूँ, अब सोऊँगा। किसी को कमरे में आने नहीं देना।'

और ग़फ़ूर के जाने के बाद मैंने ये लाइनें भी इस डायरी में लिख दीं। फिर सामान ठीक किया और जब सब सामान बाँध चुका तो ग़फ़ूर को बुलाकर कहा—'देखो ग़फ़ूर! मैं तुम्हारी गजला बीबी की बेहतरी के लिए इसी वक्त यहाँ से जा रहा हूँ। इससे पहले कि मलिक साहब जागें मेरा यहाँ से चले जाना ज़रूरी है। यह मेरी डायरी चुपके से ग़ज़ाला बीबी को दे देना।'

मगर तोबा कीजिए ! भला ग़फ़ूर मियाँ मानने वाले थे कहाँ ? पहले तो सन्नाटे में आये खड़े रहे, फिर वह आँसू बहाने लगे।

अब मुसीबत यह थी कि मलिक साहब के जगाने का वक्त क़रीब आ रहा था और बग़ैर ग़फ़ूर मियाँ को समझाने-बुझाने की कोशिश में जो बदहवाशी पैदा की जाती है वह बजाय सफाई के कुछ और उलझनें पैदा कर देती है।

आखिर निर्णयात्मक कदम उठाते हुए मैंने ग़फ़ूर से कहा—'भई, तुम मेरी बात समझ जाओगे तो मुझको समझ पाओगे। मगर अफसोस यह है कि मेरे पास तुमको समझाने का वक्त नहीं है और मुझे सबसे बड़ी फिक्र यह है कि मलिक साहब जाग उठे तो कुछ भी न हो सकेगा। तुम मेरा सामान लेकर मेरे साथ चलो, मैं तुमको रास्ते में सब कुछ बता दूंगा !'

बग़ैर कोई जवाब दिए हुए ग़फ़ूर मियाँ ने मेरा सामान उठा लिया और खामोशी से मेरे साथ हो लिया। नाला पार करने के बाद जब हम दोनों मलिक साहब की सरहद से गुज़र गए और सड़क करीब आ गई तो मैंने ग़फ़ूर मियाँ को समझाने की एक बार फिर कोशिश की।

'देखो ग़फ़ूर ! मेरे लिए सिवाय इसके अब कोई चारा नहीं कि मैं यहाँ से चला जाऊँ। मेरे यहाँ रहने से वे गुत्थियाँ न सुलझ सकेंगी जो हम तुम्हारी ग़ज़ाला बीवी के लिए सुलझाना चाहते हैं। अब मैंने अपना कच्चा चिट्ठा इस किताब में लिख दिया है जो तुम्हारे पास है और जो तुम मेरी तरफ से ग़ज़ाला को दोगे—इसको देखने के बाद वह खुद समझ जाएगी कि मेरा यहाँ रहना कितना ग़लत था।'

ग़फ़ूर ने बात काटकर कहा—'अब आप मुझसे एक बात कहलाना ही चाहते हैं तो सुन लीजिए कि आप चाहे जैसे भी हों मगर ग़ज़ाला बीबी आपको दिल ही दिल में अपना चुकी हैं।'

मैंने इस बहस को यहीं खत्म किया—'ग़फ़ूर, यह ग़लत है। मैं इसी-लिए तो यहाँ से जा रहा हूँ कि भोली-भाली ग़ज़ाला मुझको ग़लत समझ रही है और ग़लतफ़हमी का शिकार है। फिर वह ग़लतफ़हमी भी मैंने खुद पैदा की है मैं इसके लिए नहीं हूं कि मुझे अपना चुके

है क्योंकि मैं न सिर्फ़ शादी-शुदा हूँ बल्कि एक बच्चे का बाप भी हूँ।'

ग़फ़ूर के हाथ से हैण्ड-बैग छूट गया, और मैंने खुद हैण्ड-बैग उठाते हुए कहा—'मैंने एक झूठ बोला था और फिर उस झूठ ने मेरी जिन्दगी को ही झूठा बनाकर रख दिया—जो कुछ सच है वह इस डायरी में है जो तुम्हारे पास है।'

ग़फ़ूर मुझे फटी-फटी आंखों से देख रहा था और मैं एक ख़ाली ताँगा क़रीब आते देखकर उसकी तरफ़ मुड़ गया। सामान ताँगे पर रखवाकर मैंने कुछ नोट ग़फ़ूर के हाथ पर रख दिए और उसे गले लगाते हुए कहा—'तुम घबराओ नहीं, मैं तुमको ख़त लिखूंगा। और क्या मालूम हम फिर मिलें।'

पहले इसके कि ग़फ़ूर फिर आँसू बहाए, ताँगा चल चुका था।

□

तेरह

दिल्ली छोड़ने और लखनऊ पहुँचने की सूचना बकलीस को हो चुकी थी। एक छोटा सा खत दिल्ली से रवना होते समय उनको लाहौर भेज दिया था, आखिर उनका भी जवाब आया।

'हजूर !

आपके दोनों खत मिल गये। दिल्ली से लखनऊ जाना मुबारक हो। मेरा दिल कह रहा है कि यह तब्दीली अच्छी साबित होगी। मालूम नहीं क्यों जैसे दिल को एक शकून-सा हो गया है मानो बहुत बड़ा बोझ उतर गया हो। मुझे वाकई मलिक साहब और उनकी साहबजादी से डर लगने लगा था और एक धड़का-सा लगा हुआ था कि कहीं आपका यह झूठ मेरे लिए एक भयानक सच न बन जाये। खैर, जो हो गया वह हो गया।

और बहुत-सी बातों के बाद आखिर में लिखा था --और खत बराबर लिखते रहियेगा ताकि मुझको इतमीनान रहे कि आप फिर किसी के पेईंग गैस्ट बनकर ससुराल में नहीं पहुंच गये---मैके में ही हैं, चाहे होटल ही क्यों न हो?

आपकी,

बकलीस।

हमारी बीवी ने यह ठीक ही लिखा था कि दिल्ली में तो खैर फिर भी मकान मिल जाते हैं चाहे इसी तरह मिलें जिस तरह खाकसार को मिला था। मगर लखनऊ में भी परेशानी कम नहीं।

मगर साहब परेशानी के बावजूद यह हमारा सौभाग्य है कि मिल तो गया---चाहे एक कमरा ही सही। वरना बेशुमार अल्लाह के बन्दे तो सड़कों के किनारे ही पड़े हुए मिलते हैं।

हमारी बीवी को यह डर है कि कहीं उनके सरताज को कोई घर-जमाई न बना ले। उनको क्या मालूम कि यहां लानत भेजी जाती है उस जमाई पर जो घर का नाम भी ले—बल्कि तय यही किया जाता है कि शादी करके सिर्फ़ लड़की को ले जायेंगे या उसके कुछ और सम्बन्धियों को भी सर छिपाने की जगह देंगे और इसी योग्यता पर लड़कों को जाँचा जाता है कि साहब यह निस्बत जो आई है उसमें सबसे बड़ा फ़ायदा यह है कि लड़के का घर ऐसा है कि उसमें दो कमरे भी हम लोगों को मिल सकते हैं।

खैर, इन हालतों में बेगम के उस डर का तो ज़िक्र ही न था कोई, अलबत्ता सवाल यह था कि होटल की ज़िन्दगी आख़िर कब तक बसर हो सकती है?

यह होटल जिनमें हमने आकर डेरा डाला, इसके मालिक चचा ख़लील हमारे मरहूम वालिद साहब के बड़े दोस्तों में से थे। बेतकल्लुफ़ी की हद यह थी कि आख़िरी बार जब हमारे यहाँ आकर वालिद साहब के मेहमान हुए तो दो-तीन रोज़ के वायदे पर वालिद साहब से अपने कारोबारी सिलसिले में दो हज़ार रुपये कर्ज़ लेकर जो ग़ायब हुए तो जब लखनऊ में उनकी शक्ल दिखलाई पड़ी तो इन्होंने दूसरे मुसाफ़िरों से कुछ ज़्यादा किराये पर अपने इस प्यारे भतीजे को इस तरह एक कमरे में ठहरा लिया, मानो एक अनाथ को अपनी छत्र-छाया में ले लिया हो।

नौकरी के सिलसिले में हमको कोई कठिनाई नहीं हुई। लखनऊ पहुँचते ही एक स्थानीय कॉलिज में लगभग वैसी ही जगह मिल गयी जैसी छोड़ी थी, और अब फ़िक्र थी किसी ऐसी जगह की जिसको घर कहा जा सके, और उधर चचा ख़लील की यह कोशिश थी कि दुनिया इधर से उधर हो जाये मगर प्यारे भतीजे को घर न मिले वरना पाला-पोसा भतीजा बेहाथ हो जायेगा। जहाँ उनको अपने किसी सी० आई० डी० से सूचना मिली कि यह हज़रत अमुक घर तय कर रहे हैं बस उनके घोड़े दौड़ने शुरू हो जाते और वह उस वक़्त तक दम न लेते थे जब तक कि घर के मालिक को घर न देने पर राज़ी नहीं कर लेते थे।

दो-तीन बार घर का मामला तय किया—किराया तय हो गया

पगड़ी की रकम तय हो गई······सब-कुछ हो गया लेकिन एकाएक मालूम हुआ कि घर कोई और साहब ले उड़े और छान-बीन करने पर मालूम हुआ कि यह सब चचा खलील की कृपा है।

जहर का घूंट पीकर रह गये।
और कर भी क्या सकते थे!

□

चौदह

एक तो होटल, फिर चचा ख़लील का होटल—करेला और नीम-चढ़ा। बड़ी खूबियों के हैं यह बुज़ुर्ग और बड़े ही शरीफ भी। यह होटल जनाब ने यह कहकर एलाट कराया है कि कई आलीशान होटल छोड़कर आया हूँ और जिस तरह शरणार्थियों का एक वर्ग लाखों से कम की बात नहीं करता उसी तरह चचा ख़लील भी अपनी गिनती उन्हीं में कराते हैं। और कोई भी झूठी-सूची गवाही हो तो हमें पेश करते।

बातें ऐसी हाँकते कि कानों को हाथ लगाने को जी चाहता। दो टके के आदमी अब अपने-आपको रईस समझते हैं।

एक दिन फरमाने लगे—'साहब, इन साहबजादे से पूछिये—यह मेरे लिए औलाद के बराबर हैं—इनके बाबाजान से ऐसी दोस्ती थी कि क्या बतायें? अब वह दोस्त कहाँ मिलते हैं? वह भी साहब अपने जमाने के रईसों में थे। हमारी भी एक मोटर थी'''क्यों बरखुरदार, तुमने वह ब्यूक तो देखी होगी जो हमने १६०५ में खरीदी थी?'

अर्ज़ किया—'क्या कहना उस ब्यूक का। शहर के तमाम रईस आते थे उसे देखने।'

और चचा मियाँ इस गवाही पर फौरन ही चाय का आर्डर दे देते थे।

धीरे-धीरे चचा मियाँ से झूठ बुलवाने में मजा लेने लगा। अलताफ साहब भी इसी होटल में स्थायी तौर पर रहते थे। इन बेचारे के हालात भी कुछ अपने जैसे ही थे कि बीवी-बच्चे कहीं पड़े हैं और खुद में नौकर हैं और सर छिपाने की जगह होटल है

अलताफ साहब बड़े ज़िन्दादिल और समझदार आदमी हैं। अब इसको आप चाहे कुछ कहिए मगर अलताफ साहब से हमारे सम्बन्ध बहुत जल्दी बढ़ गये।

उनको मालूम था कि हमारे चचाजान किस किस्म के बुज़ुर्ग हैं और उनको चचाजान की बातों में बड़ा मज़ा आता था।

हम दोनों जिस वक्त चचा ख़लील से झूठ बुलवाते तो बड़ा ही मज़ा आता। मगर इस अक्ल के दुश्मन को शायद यह अहसास न होता कि समझने वाले उसको क्या समझ रहे हैं?

अलताफ का अभिनय कमाल का होता था। बड़ी संजीदगी से कोई शोशा छोड़ देना और फिर चचाजान झूठ के पुल बाँधने शुरू कर देते। मिसाल के तौर पर अलताफ ने बड़ी संजीदगी से कह दिया—'माफ कीजिएगा ख़लील साहब, एक बात पूछने को बहुत जी चाहता है, मगर हिम्मत नही होती। अब जी कड़ा करके पूछ लेता हूँ। क्या कभी कलकत्ते में भी रहे हैं आप?'

बड़ी भोली सूरत बनाकर बोले—'क्यों, ख़ैरियत तो है?'

अलताफ साहब ने बड़ी संजीदगी से कहा—'आपका माथा और आँखें जहाँआरा कंचन से इतनी मिलत-जुलती हैं कि ऐसी बराबरी मैंने तो देखी नहीं।'

एकदम गोया चोर से बनकर खामोश हो गये और फिर मेरी ओर देखकर हैरत से फरमाया—'भई, यह आदमी बड़ा ख़तरनाक है, बला का समझदार है। बखुदा मेरी यह चोरी आज तक किसी ने नहीं पकड़ी थी जो आज इन हज़रत ने पकड़ी है। साहब, किस्सा यह है कि यह भी जवानी की एक भूल थी, ख़ुदा माफ करे—मगर अलताफ मियाँ, मान गये तुमको!'

मुझसे बोले—'तुम्हारे बाबाजान को सब-कुछ मालूम था और मेरी कौन-सी बात थी जो उनको मालूम न थी! बस वह दो बातों से बहुत जलते थे। एक मेरे इस शौक से, दूसरे रेस के शौक से। ठीक ही जलते थे। भला ग़ज़ब ख़ुदा का, बम्बई में 'हिज़ हाइनेस आग़ा खान की चोट की चोट पर बाज़ियाँ लग रही हैं रेस में कहाँ वह कहाँ मैं मगर रुपया फालतू था तुम सबको मालूम होगा—अब बोलते क्यों नहीं?

अर्ज़ किया—'अब मैं क्या कहूँ बुजुर्गों की बातें—मगर खूब उड़ाया है आपने भी रुपया।'

कहने लगे—'भई, कसम ले लो जो मैंने कभी गिनकर किसी को रुपया दिया हो।'

मैं और अलताफ दोनों चन्द ही दिनों में इस झूठ से तंग आ गये और दोनों मिलकर दुआ मांगने लगे कि अगर दोनों को अलग-अलग नहीं तो एक घर मिल जाये।

□

पन्द्रह

दिन भर कॉलिज में लड़कों को अपना भेजा खिलाना, शाम को थके-हारे होटल में आना और फिर चचा ख़लील की कल्पना से ही काँपना कि कहीं वह हजरत न टपक आवें और दिमाग़ चाटने बैठ जायें।

कभी अलताफ़ साहब के साथ प्रोग्राम बन गया तो पिक्चर चले गए, वरना दिमाग़पच्ची कराते रहे चचा ख़लील से—दुनिया भर की बकवास और झूठों के जंगल के जंगल सुनते।

मगर अब भी जब कभी बिस्तर पर पहुँचते और नींद का इन्तज़ार करते तो मलिक साहब अपने ढेर सारे प्यार के साथ सामने आ जाते थे। गफ़ूर की वह डबडबाई हुई आँखें अब सामने आ जाया करती थीं और नींद उड़ जाया करती।

कई बार इरादा किया कि मलिक साहब को एक माफ़ी का ख़त लिख दें—मगर ख़ुदा भला करे डरपोकपन का कि इतनी दूर बैठकर भी हिम्मत न होती थी और यह ख़ामोशी इस अनजाने क़सूर को और भी संगीन बनाती चली जाती थी। अजीब ख़्याल आते थे कि मालूम नहीं गज़ाला भी माफ़ करेगी या नहीं?

अलताफ़ साहब से सम्बन्ध इस हद तक बढ़ चुके थे कि उनको भी मलिक साहब का किस्सा मालूम था। मगर इस गुत्थी को सुलझाने की कोई तरकीब बताने में असमर्थ थे।

शामत जब आती है तो हमेशा उस रास्ते से आती है जिसकी तरफ़ शक भी न हो। इसलिए ऐसा ही हुआ। एक दिन क्लास लेने के बाद निकले ही थे कि चपरासी ने सूचना दी कि आपके कमरे में कुछ साहेबान

इन्तजार मे हैं। यह खबर पाते ही सीधा अपने कमरे मे पहुँचा, इन अजनबी मेहमानों की खातिरदारी की तो मालूम हुआ कि ये लोग स्थानीय रेडियो स्टेशन से तशरीफ लाये हैं और एक भाषण के सिलसिले में इस नाचीज को तैयार करना चाहते हैं।

भाषण का विषय कुछ अपनी ही रुचि का था कि इन्कार न कर सके और प्रिन्सिपल से रस्मी इजाज़त लेकर रेडियो के प्रतिनिधियों से वादा कर लिया कि मै ज़रूर भाषण करूँगा।

बस वह भाषण करना क़यामत बन गया और सारा भांडा इस तरह फूटा कि भाषण के चौथे ही दिन रेडियो स्टेशन के वह महाशय पधारे और एक लिफाफा भी दे गये कि आपका यह खत रेडियो स्टेशन की मार्फत आया है।

उस महाशय के विदा होने के बाद अब जो खत देखते हैं, तो मलिक साहब का—हाथों के तोते उड़ गये, पाँव तले की जमीन निकल गई।

आखिर जल्द-जल्द ख़त पढ़ना शुरू किया—

'शौकत मियाँ,

दुआयें।

'वही मिसाल है कि तू जहाँ जाके छिपा हमने देख लिया।

'एक अजीब उलझन और एक अजीब पहेली इस तरह हल हुई कि कल ग़ज़ाला बीबी ने अचानक अपनी वालिदा को पागलों की तरह रेडियो सैट की तरफ घसीटा और आपकी आवाज़ सुनाई। फिर मुझको बुलाया गया और मैं आपकी तकरीर सुनता रहा। आखिर रात को रेडियो पर तुम्हारी आवाज सुनने के बाद मालूम हुआ कि जैसे अंधेरे में रोशनी की झलक दिखाई दी है।

'अब तक तो हम लोग सिर्फ़ अंधेरे में आपको टटोल रहे थे, बल्कि टापते फिर रहे थे और अब उम्मीद पैदा हुई कि शायद रेडियो वाले मेरा यह ख़त आप तक पहुँचा दें और आपको मालूम हो सके कि जिन लोगों को आप छोड़ आए हैं, वे आपके लिए अब भी कैसा भाव रखते हैं।

'आपके जाने के बाद दो दिन तक समझ में नहीं आया कि यह क्या माजरा है सिवाय इसके कि मैं पागलों की तरह आपकी तलाश में फिरता

रहा। मगर तीसरे दिन शायद मियाँ गफ़ूर को मुझ पर रहम आ गया और उनसे यह मालूम हुआ कि आप कोई किताब अज़ीज़ा ग़ज़ाला को दे गए हैं। उसे पढ़ने पर मुझे पता चला कि आप क्यों यहाँ से चले गए?

'शौकत मियाँ, आपने जो फ़ैसला किया और जो कदम उठाया उन हालात में आपको यही करना चाहिए था अब सब बातें साफ़ हो गई हैं।'

'बहरहाल, आप अपने दिल में यह बात बिल्कुल निकाल दीजिए कि हम लोग आपसे नाराज़ या नाखुश हैं। आपने जिस मजबूरी के मातहत अपने हालात को छिपाये रखा और यह राज़दारी आपको जिस तरह राज़ बनाती चली गई उसका हम सबको अन्दाज़ है। और तो और, खुद ग़ज़ाला कल से यही कह रही है कि अब मैं भाईजान को यहाँ बुलाऊँगी, अब तो उनका पता चल गया है और उनसे पर्दा न करूँगी। हम लोगों ने भी उसको तुमसे पर्दा उठा देने की इजाज़त दे दी है और मेरे दिमाग मे तुम्हारे बारे में बहुत-सी तजवीजें आ रही हैं। मगर उनके बारे में उस वक्त तक न लिखूँगा जब तक तुम इस खत का जवाब न दोगे और अपना पता लिखोगे, ताकि मुझे इत्मीनान हो सके।

'तुम्हारी चाची तुमको बहुत दुआएँ लिखवा रही हैं—गफ़ूर भी सलाम करता है। ग़ज़ाला कहती है कि मैं खुद अपने कलम से भाईजान को कुछ लिखूंगी, लिहाज़ा मैं यह खत जवाब की उम्मीद पर खत्म करता हूँ।

तुम्हारा मलिक मुहम्मद अहमद

मलिक साहब के पत्र के बाद दो पंक्तियाँ ग़ज़ाला ने भी इस खत मे लिखी थीं।—

'मेरे भाईजान!

'अपनी बहन का सलाम कबूल कीजिए। अब्बाजान के खत से इसके बारे में आपको अन्दाज़ा हो गया होगा कि सबका दिल आपकी तरफ से कितना साफ़ है। मगर मैं इतना और बताना चाहती हूँ कि इसी बहाने खुदा ने मुझको जो भाई दिया है उसको चाहिए कि वह अन्दाज़ करे कि बहन की भावनाओं और भाई के लिए तरसती हुई बहन की भावनाएँ कितनी नाज़ुक होती हैं।

—ग़ज़ाला'

इस खत को पढ़कर बोझ तो सर से उतर ही गया था, मगर अब जल्दी यह थी किसी तरह यह ख़त अलताफ साहब को दिखाकर जल्दी से जल्दी इसका जवाब लिखा जाये।

मलिक साहब और उनके घर-भर की शराफत ने इस ख़त में तो सचमुच बेदामों ख़रीद लिया।

सोलह

मलिक साहब और शजाअत में पत्र-व्यवहार बाकायदा जारी था और इस तरह जिन्दगी में एक अच्छी हरकत पैदा कर दी थी। मलिक साहब का अब आग्रह यह था कि जिस तरह भी हो दिल्ली वापस आ जाओ और शुजाअत की जिद यह थी कि भाभी और मुन्ने को फौरन बुला लो। मलिक साहब अपना घर पेश कर रहे थे, बल्कि आखिरी खत में तो यह धमकी भी दी कि अगर तुमने दिल्ली पहुँचने में देर की या जाकर बीवी-बच्चे को न लाये तो वह खुद जाकर अपनी बहू और पोते को ले आएँगे। फिर तुम खुद झक मारकर आओगे।

मैं उनको लिख चुका था, और सच भी यही था कि नौकरी कोई खेल तो है नहीं कि आदमी खेलता रहे—जब जी चाहा छोड़ दिया और जब भी चाहा ले लिया। मगर इनका क्या इलाज कि वह बराबर कह रहे हैं कि नौकरी मिल जाए तो ठीक है वरना मिलती रहेगी। मेरा भी जो कुछ है वह सब तुम्हारा ही है और आखिरी खत में तो बड़े मियाँ ने कमाल ही कर दिया कि हमारी बीवी और मुन्ने को यहाँ बुलाने के सिलसिले में सारी कार्रवाई पूरी होने की खबर मुझको दे दी कि मैंने हिन्दुस्तान के परमिट ऑफिस और पाकिस्तान के परमिट ऑफिस दोनों जगह कोशिश करके तुम्हारी बीवी और बच्चे को बुलाने का पूरा इंतज़ाम कर लिया है अब तुम खुद जाकर उनको ले आओ वरना मैं जाता हूँ।

हमारे अलताफ साहब की समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि मलिक साहब लाख भले आदमी सही—उनकी बीवी और लड़की शरीफ सही मगर यह तो वह लगते हैं जो साधारणतः इस संसार में हुआ ही नहीं

करते।

कहने लगे—'भई, मैं कहता हूँ कहीं इन बड़े मियाँ का कोई और मतलब तो नहीं है ?'

और जब मैं यह कहता कि और मतलब ही क्या हो सकता है तो वह लाजवाब होकर कहते हैं—'यही मैं भी ग़ौर करता हूँ'''मगर कुछ समझ में नहीं आती यह बात ! अजीब सनकी बुड्ढा है।'

अर्ज़ किया—'मुमकिन है इसमें कुछ मेरी शराफ़त और सआदतमंदी का भी जादू हो।'

अलताफ साहब इसी चक्कर में वापस जाते हुए कहते—'हो सकता है, मगर भई दिमाग़ मे उतरती नहीं यह बात।'

और सचमुच यह बात खुद अपने दिमाग में भी न उतरती थी।

मगर इस खत के आने के बाद तो इस सोच-विचार का मौका ही न था। लिहाजा यह ख़त लिये हुए मैं सीधा होटल पहुँचा। शुक्र है कि अलताफ साहब मिल गये। ख्याल यही था कि उनसे सलाह ली जाये और फिर कोई क़दम उठाया जाये।

ख़त उनके सामने डालते हुए कहा—'बन्दानवाज ! पानी सर से गुजर चुका है, अब बहानों से काम नहीं चलेगा। मलिक साहब को आप नहीं जानते—प्यार का तूफान आ चुका है। बहरहाल, पढ़ लीजिए यह ख़त, फिर कोई सलाह दीजिएगा।'

अलताफ साहब को यह ख़त देकर मैं कपड़े बदलने और हाथ-मुँह धोने अपने कमरे की तरफ आ ही रहा था कि चचा ख़लील साहब अपने नौकर से सिर में तेल डलवाते हुए अन्दर आ गए, मुझको देखकर आवाज़ दी—

'मैंने कहा यह कहाँ अलग ही अलग, ज़रा बात तो सुनो !'

चचा की बस यही हरकत ज़हर लगती है कि लागू होकर रह गये हैं। किसी को कमरे के बाहर देखा और दबोच लिया।

बोले—'मियाँ, तुम्हें मेरी कसम, जरा यह तेल सूँघकर देखो।'

कुछ पता न चला कि चचाजान तेल की प्रशंसा चाहते हैं या बुराई। इस किस्म के मौकों पे कुछ अजीब गोल-सी बात करनी पड़ती

है। अतः तेल सूंघकर कहा—'बहुत खूब'''

उन्होंने फरमाया—'अब ज़रा इन हज़रत को यकीन दिलाओ कि इस किस्म का तेल सर में डालना तो क्या, हम लोग अपने लड़ने वाले मर्दों के सींगों पर भी न लगाते थे। मगर वक्त उल्टा पड़ गया है''' तुमको तो याद न होगा, मियाँ अलबत्ता तुम्हारे वालिद जानते थे कि मैं तो चमेली के ताज़ा फूल अपने चमन से भेजकर खुद तेल निकलवाया करता था।'

यह अन्दाज़ था उस बातचीत के छिड़ने का जिसको सुनने के लिए सर में न सिर्फ़ फालतू दिमाग़ की ज़रूरत थी बल्कि सुनना ज़रूरी था। मगर इस वक्त हमारा दिल अटका हुआ था उस ख़त में जिसको अलताफ़ साहब पढ़ रहे थे और पढ़ने के बाद सलाह देने वाले थे, इसलिए चचजान से कहा—'मैं ज़रा जल्दी काम में जा रहा हूँ, वापसी पर बात करूंगा।'

और पहले इसके कि चचा बिदा का कोई जवाब देते हम वहाँ से चलते बने। बात यह है कि उन हज़रत का क्या, अपना होटल, अपना वक्त और काम सिर्फ़ झूठ बोलना। अब ऐसे आदमी के झूठ को कोई कब तक सुनता रहे आखिर।

□

सत्रह

बकलीस के ख़त बराबर आते रहते थे और अब उनको यह भी मालूम हो चुका था कि मलिक साहब ने न सिर्फ़ मेरा पता चला लिया है, बल्कि वह यह भी तय कर चुके हैं कि मैं फिर दिल्ली वापस जाऊँ और बीवी-बच्चों को बुला लाऊँ। इस रहस्योद्घाटन ने बकलीस के विचारों में क्रान्ति ला दी और जिस बुज़ुर्ग को वह इतना ख़तरनाक समझ रही थी उनको अब फ़रिश्ता समझने लगी थी जो उनको बुलवाने का इन्तजाम कर रहा था।

इसके अलावा मालूम हुआ कि ग़ज़ाला ने बकलीस को सीधे ख़त लिखकर ननद-भावज का बड़ा अच्छा रिश्ता कायम कर लिया है। इन सब बातों से प्रभावित होकर बकलीस ने लिखा कि—

'मैं तो ख़ुदा की कसम सख्त हैरत में हूँ कि संसार में ऐसे लोग भी होते हैं और मैं आपसे कह नहीं सकती कि मैं कितनी शर्मिन्दा हो रही हूँ कि मैंने ऐसे भले लोगों के लिए यह राय क़ायम की थी कि ये लोग मुझ पर डाका डाल रहे हैं—तोबा-तोबा! मैंने ग़ज़ाला को ख़त के जवाब में लिख दिया है कि मैं आने के लिए बिलकुल तैयार हूँ और जो कोई भी मुझको लेने आयेगा मैं रवाना हो जाऊँगी। मगर क्या यह अच्छा न होगा कि आप ख़ुद ही लेने आयें—यहाँ सब अज़ीज़ों से मिल लेंगे और छोड़े वतन को एक बार फिर देख लेंगे।'

देखा आपने यह परिवर्तन? हमारी बीवी के दिल में मलिक साहब के लिए भी श्रद्धा हो ही गई और ग़ज़ाला से भी प्यार।

मैंने यह ख़त भी अलताफ साहब को पेश कर दिया। अलताफ

साहब अब इस बात के कायल हो चुके थे कि सिवाय इसके और कोई बात समझ में नहीं आई कि मलिक साहब अपने सारे परिवार सहित किसी दिमागी खराबी के शिकार हैं और जिस तरह हर पागल को कोई न कोई धुन सवार हो जाती है उसी तरह इन हज़रत को भी यह सनक है।

बहरहाल, बहुत-कुछ गौर करने के बाद हम दोनों ने यही फैसला किया कि अब पत्र-व्यवहार से काम न चलेगा, बल्कि कॉलिज से छुट्टी लेकर दिल्ली जाना ही पड़ेगा वरना मलिक साहब मारे निष्ठा के शायद खुद ही वकलीस को लेने रवाना हो जायेंगे।

अलताफ साहब की यह राय बिल्कुल ठीक थी। अब तय यह पाया कि छुट्टी की दरख्वास्त देकर फिलहाल दिल्ली और वहाँ से बीवी-बच्चों को लेने लाहौर पहुँचा जाए, फिर देखा जाएगा। घर की कोशिश कभी न कभी तो सफल हो ही जायेगी। मैंने लाख-लाख अलताफ साहब को समझाया।

'बन्दानवाज़! घर की उम्मीद उस समय तक तो बेकार ही है, जब तक आप इस होटल में चचा खलील की छत्र-छाया में रह रहे। अब तक यह हज़रत कई मिले-मिलाये घर छुड़वा चुके हैं और इनकी दिन-रात यही कोशिश है कि और चाहे जो कुछ भी हो मगर हमको घर न मिले।'

अलताफ साहब ने मुँह बनाकर कहा—'हज़रत, माफ कीजिएगा। वह ठहरे आपके चचा मगर प्रोग्राम कुछ और ही है। वह यह कि मैं भी उनको चचा बनाकर छोड़ दूंगा। आपको नहीं मालूम यह आदमी बड़ा बदमाश और हरामखोर भी है। इस होटल में तो अब किसी शरीफ आदमी को यूं भी नहीं रहना चाहिए। आपके यह चचाजान जनरल सप्लायर भी हो गए हैं। आप तो कालिज गए थे, यहाँ एक अजीब किस्सा पैदा हो गया है कि पुलिस ने छापा मारकर दो लड़कियाँ बरामद की हैं।'

हमने अचरज से पूछा—'लड़कियाँ''इस होटल में!'

अलताफ साहब ने कहा 'जी हाँ लड़कियाँ जो भगा दी गई हैं। वह

जो नम्बर चौदह में ख़ान साहब आए हुए हैं, वह इसी नेक काम के लिए तशरीफ लाए हैं। आपके चचाजान ने उससे काफी रकम लेकर अपने आदमियों से यह अपहरण कराया, जिसका पुलिस को वक्त पर पता चल गया। मगर अफसोस तो यह है कि खुद वह मरदूद बच गया किसी न किसी तरकीब से।'

यह ज़िक्र हो ही रहा था कि कमरे की चिलमन उठाकर चाचा ख़लील ने आते हुए कहा—'क्या हो रहा है ?'

अलताफ साहब ने जल्दी से कहा—'कहिए ख़ान साहब का क्या हुआ ?'

चाचा ख़लील ने फौरन ही कहा—'होगा तो ख़ैर क्या, मगर खाम-ख़्वाह की बदनामी है। करे कोई, भरे कोई। पूछे अब कोई भला मुझे क्या मालूम कि जो औरतें आ रही हैं वह मुसाफिर की माँ-बहनें हैं या भगाई हुई हैं। एक बात ज़रा टेढ़ी पैदा हो गई है कि वह जो बैयरा जुगनू था, उस नमकहराम ने अपने बयान में मेरा नाम लिखा दिया है कि गोया मैंने उससे यह लड़कियाँ उठवाई थीं।'

मैंने अजनबी बनकर कहा—'मेरी तो समझ में नहीं आ रहा कि बात क्या है ?'

चचा ने फरमाया—'बतायेंगे पूरी बात। यहाँ एक क़िस्सा हो गया है। बहरहाल अलताफ साहब, अब ज़रा आप से काम लेना है और वह यह है कि जो पुलिस इंस्पेक्टर यहाँ आया था उससे आपकी बेतक़ल्लुफी थी। उसको ज़रा समझा दीजिए कि एक शरीफ आदमी के पीछे न पड़े इस तरह। अगर कुछ मुट्ठी गरम करना चाहते हैं तो इसके लिए भी तैयार हूँ। मगर होटल की बदनामी न होने पाए।'

अलताफ ने साफ-साफ कह दिया—'देखिए ख़ान साहब, बात यह है कि अव्वल तो यह पुलिस अफसर इस किस्म का आदमी नहीं है कि रिश्वत से उसको गरम किया जाए। रिश्वत के सिलसिले में पुलिस बद-नाम होकर रह गई है वरना यह सच है कि पुलिस में भी ईमानदार लोग होते हैं। दूसरे मैं इस बात में पड़ना नहीं चाहता। मुझको तो आप अपने

होटल का सिर्फ मुसाफिर ही समझें ।'

चाचा ख़लील इस साफ जवाब पर हैरान इसलिए न हुए होंगे कि अलताफ साहब को वह हमेशा से बड़ा मुँहफट आदमी समझते हैं । सच-मुच मलिक साहब कितनी सच्ची बात कहते थे कि होटल की जिन्दगी शरीफाना हो ही नहीं सकती ।

❐

अठारह

इधर मैं छुट्टी ले चुका था, उधर होटल का किस्सा तूल पकड़ा गया था और आसार कुछ ऐसे नजर आ रहे थे कि चाचा खलील का सिर्फ लायसेन्स ही ज़ब्त न होगा पर खुद भी ज़ब्त कर लिए जाएँगे और अगर पुलिस ने उसके साथ वाकई रियायत न बरती तो सज़ा भी हो जाएगी। चाचा खलील लाख बदमाश सही मगर आजकल उनकी हालत बड़ी दयनीय थी। यहाँ तक कि मुझे खुद अलताफ साहब की खुशामद करनी पड़ी कि अगर कोई सूरत हो सके तो इस कम्बख्त चाचा को छुटकारा दिला दो।

बहुत कहने-सुनने के बाद अलताफ साहब इस बात पर राजी हो गए कि अपने दोस्त पुलिस अफसर को चाय पर बुलाकर उस हद तक सिफारिश करेंगे जिस हद तक मुमकिन हो। मैं इस बात पर तैयार हो गया बल्कि चाचा खलील ने फरमाया कि चाय का इन्तजाम मेरे सर रहा तो भी अलताफ साहब ने कह दिया कि यह गलत है। यह चाय आपके होटल में भी न होगी बल्कि किसी दूसरे होटल में होगी और आप भी वहाँ न होंगे। ज़रूरत होगी तो आपको बुला लिया जाएगा।

अलताफ साहब ने दूसरे ही दिन उन पुलिस अफसर यानी शहाब साहब को एक दूसरे होटल में चाय पर बुला लिया। मुझसे परिचय कराया। हम तीनों ही बेतकल्लुफ दोस्त बन गये तो शहाब साहब ने कहा—'मुझे तो हैरत है कि आप लोग इस होटल में कैसे रह रहे हैं। साहब, यह तो बदमाशों का पूरा अड्डा है, शराबें यहाँ चलें, जुए की फड़ें यहाँ जमें [illegible] यहाँ हों [illegible]

मैंने कहा—'हम लोग अपनी खुशी से इस होटल में नहीं हैं—घर के नाम पर अगर कोई ठिकाना मिल जाए तो आज ही लानत भेजें इस घर।'

शहाब साहब ने भी घर का नाम सुनकर वही हरकत की जो और सब किया करते हैं। आजकल घर के नाम को सुनकर लोग चेहरे पर प्रश्नचिह्न लटका लिया करते हैं। इसी तरह उन्होंने भी घर का नाम सुनकर कहा—घर'' हाँ साहब, घर तो वाकई प्राबलम है।'

बात काटकर कहा—'जी नहीं, प्राबलम तो हल हो जाया करती है। यह तो प्राबलम के अलावा कोई और चीज़ है।'

शहाब साहब ने कहा—'मगर मेरा मतलब यह था कि और भी तो होटल हैं जहाँ आप शरीफाना जिन्दगी बसर कर सकते हैं—इसी अड्डे को क्यों चुना ?'

अर्ज़ किया—'मेरे एक बुज़ुर्ग का कहना है कि होटल में शरीफाना ज़िन्दगी बसर हो नहीं सकती।'

शहाब साहब ने कहा—'यह तो गलत है। मेरे ख्याल में तो जब जानूँ कि आप, अलताफ या ऐसा ही कोई जिम्मेदार आदमी होटल खोले और उसका इन्तजाम देखे, फिर कैसे यह सब हो सकता है ?'

अलताफ ने मौका पाकर कहा—'अच्छा भाई शहाब, एक बात साफ-साफ बताओ। होटल के मालिक को फाँस तो लिया है तुमने, लेकिन कोई ऐसी सूरत भी है कि वह बच सके ?'

शहाब ने कहा—'अगर ईमानदारी से काम लिया जाय तो कोई ऐसी सूरत नहीं है। आपको मालूम नहीं उस बदबख्त के हाथ-पैरों ने उसके खिलाफ बयान दिए हैं और मैं तो यह चाहता हूँ कि ऐसे हराम-खोरों को ऐसा सबक दिया जाए कि उनको नसीहत मिल सके।'

अलताफ ने कहा—'यह तो मैं कह नहीं सकता कि उन हज़रतों में सच्चाई है मगर'''

शहाब ने कहा—'अजी तोबा कीजिए। यह बदमाश ऐसे ही होते हैं। मैं तो इन हज़रतों को सज़ा तक पहुँचाकर रहूँगा।'

और शहाब बात कर रहे थे और मैं गहरी फिक्र में खोया

हुआ था। मेरे इस भाव को वे दोनों ताड़ गए। शहाब बोले—'कहाँ खो गए, जनाब ?'

मैंने कहा—'जी हाँ, मैं एक बात सोच रहा था—तो आप ख़लील खाँ को किसी तरह नहीं छोड़ सकते ? अच्छा मान लीजिए कि वह होटल को छोड़ दें ?'

अलताफ ने गौर से मेरी तरफ देखा कि मैं क्या बक रहा हूँ और शहाब साहब ने बड़ी शराफत से कहा—'साहब, मुझे ख़लील खाँ से कोई खानदानी दुश्मनी तो है नहीं—अगर आप चाहते है कि वह छोड़ दिए जायें तो उनको चाहिए कि होटल का धन्धा छोड़कर होटल किसी अच्छे आदमी के सुपुर्द कर दें।'

मैंने अलताफ से कहा—'मेरे ख्याल में यह तजवीज़ ख़लील खाँ के सामने पेश कर दी जाए। यदि वह राज़ी हो तो होटल का ख़रीदार मैं आज दे सकता हूँ।'

शहाब ने कहा—'और नए मालिक को होटल का लायसेंस दिलाने का जिम्मा मैं लेता हूँ।'

मैं उनसे इजाज़त लेकर कमरे से बाहर निकला और चचा ख़लील को साथ ले आया जो बाहर खड़े थे। शहाब ने उनको देखते ही कहा—'आइये ख़ान साहब ! वकील तो आपने अच्छे किए हैं, मगर हुज़ूर, मैं आपको सरकारी मेहमान बनाए बिना न रहूँगा। हाँ, अगर आप हथकड़ियों से बचना चाहते हैं तो यह होटल बेचकर कोई और धन्धा कीजिए और होटल किसी अच्छे आदमी को चलाने दीजिए।'

ख़लील खाँ ने मसकीन सूरत बनाकर कहा—'मैं खुद इस होटल से तंग आ चुका हूँ।'

'तो जल्द बेच दीजिए।'

ख़ान साहब ने कहा—'मगर सरकार, मैं इतनी जल्दी होटल का ख़रीदार कहाँ से लाऊँगा ?'

मैंने बात काटकर कहा—'इसका जिम्मेदार मैं हूँ। आप यह फरमाइये कि होटल का क्या मुआवज़ा चाहिये आपको ?'

ख़ान साहब ने जल्दी से कहा 'होटल के सामान वगैरह को मिला

कर तीस हज़ार का सौदा···।'

शहाब ने कहा—'लाहौलविला···कौन आपके इस होटल के तीस हज़ार देगा! है ही क्या आपके होटल में—बारह-तेरह कमरे हैं और उनमें बारह-तेरह बिस्तर, बारह-तेरह मेज, तीस-चालीस कुर्सियाँ और दो-चार सोफा-सैट और इसी किस्म का कुछ काठ-कबाड़।'

खान साहब ने कहा—'और हजूर, कालीन, आइने, बर्तन, बाथरूमों के सैट।'

शहाब ने कहा—'यह सब कुछ मिलाकर बीस हज़ार भी आपको मिल जाएँ तो ग़नीमत समझिये।'

खान साहब ने कहा—'चलिए मैं तैयार हूँ, मगर कौन है जो एकदम से यह सौदा कर ले?'

मैंने कहा—'आप बात पक्की कीजिए, सौदा मैं कराये देता हूँ। अभी शर्त यह है कि अगर आपके होटल पर कुछ और बोझ होगा तो इसका ज़िम्मेदार नया मालिक न होगा।'

खान साहब ने कहा—'जी हरगिज नहीं। मैं खुद जिम्मेदार हूँ इस बारे में।'

मैंने कहा—'सुनिये चचा मियाँ! बीस हज़ार में इस तरह मामला तय हो सकता है कि दो हज़ार आपको वह भी छोड़ना पड़ेगा जो आप वालिद साहब से कर्ज ले चुके हैं।'

बड़ी भोली सूरत बनाकर खान साहब दो मिनट के लिए जैसे खो-से गये, फिर चौंककर बोले—'वह, अच्छा वह—हाँ याद आ गई वह रकम, तो आप अठारह हज़ार दिलवा दीजिये।' मैंने कहा—हो गया सौदा। मैं होटल चलकर आपको अठारह हज़ार का चैक दिये देता हूँ और लिखा-पढी हो जायेगी।'

अलताफ सख्त हैरान बैठे थे, आखिर वह भी चुप न रह सके और बड़े आश्चर्य से पूछा—'सौदा तो आप इस तरह कर रहे हैं जैसे खुद ही होटल चलाने का इरादा हो?'

मैंने कहा—'हाँ आप यही समझिये. किस्सा दरअसल यही है कि हमारे मलिक साहब खुद ही होटल के मालिक रह चुके हैं और अपने

होने वाले दामाद मियां जफर को होटल खोल चुके हैं···अब मैं चाहता हूँ कि अपनी निगरानी में जफर को होटल चलवाकर मलिक साहब को इस बात का कायल कर सकूं कि दरअसल होटल कोई ग़ैरशरीफ़ाना जगह नहीं होती, बल्कि उसको बनाने वाले जैसा बना देते हैं वैसा ही बन जाता है ।'

शहाब ने कहा—'बेशक, मेरा भी यही ख्याल है ।'

और फिर ख़ान साहब से शहाब ने कहा—'लीजिए ख़ान साहब, आपकी बला तो टल गई, मैं इन लोगों से वादा कर चुका था कि आपने होटल बेच दिया तो आपको छोड़ दूंगा वरना आपका बचना मुश्किल है ।'

ख़ान साहब इस समय बड़े आज्ञाकारी बने हुए थे ।

□

उन्नीस

शहाब साहब की राय से जब मैं एक वकील साहब से होटल की मालकियत और खरीदारी के बारे में कागजात बनाकर होटल वापस आया तो अल्ताफ साहब मेरे ही इन्तजार में अपने कमरे में टहल रहे थे और मुझको देखकर करीब आते हुए बोले —'साहब ! आप भी अजीब पहेली निकले। मेरी समझ में तो जनाब की बात नहीं आई।'

मैं समझ तो गया कि यह क्यों कह रहे हैं मगर कुछ और समझने के लिए कहा --'क्या मतलब है आपका ?'

कहने लगे—'अजीब मामला है···कमर बाँधे हुए तैयार हैं दिल्ली जाने को और मामला तय कर रहे हैं होटल का। कोई पूछे जनाब कि इस कारोबार का क्या तजुर्बा है और आप यह होटल का बखेड़ा फैला-इयेगा या नौकरी करेंगे ?

मैंने अलताफ को अपने कमरे में लाकर इतमीनान से बिठाने के बाद कहा—'भाईजान ! आप मुझको अक्ल से इतना बेगाना तो न समझते होंगे कि यह सामने की बात भी गोया मेरे दिमाग में न आई होगी। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि मैंने सब फैसला सोच-समझकर किया है··· मगर जफर मियाँ जो मलिक साहब के होने वाले दामाद हैं, उनको ठिकाने लगाने की सिर्फ यही एक तरकीब है।'

अलताफ साहब ने कहा —'अब शायद आप मुझको जाने क्या समझ रहे हैं कि मैं इतनी-सी बात भी नहीं जानता। मगर सवाल यह है कि आपके बस का रोग नहीं—यह क्या सूझ गई आपको ?'

हमने कहा—'बता चुका हूँ कि यह सब कुछ जफर के लिए कर रहा

हूँ'' जिसको मैं बड़ी हद तक आदमी बना लाया हूँ।'

अलताफ साहब ने कहा—'मगर जनाब को यह नही मालूम कि इस सूरत मे आपका यहाँ स्थायी तौर पर रहना कितना ज़रूरी बन जाता है!'

अर्ज़ किया—'मगर जब होटल अपना हो गया तो रहने के सिल-सिले की सबसे बड़ी रुकावट एक हद तक दूर हो सकती है'''जब तक घर न मिले उस वक्त तक अगर इसी होटल की ऊपर वाली मंजिल पर हम लोग इसी तरह अपना घर बना ले तो क्या बुरा है?'

अलताफ साहब ने वाकई बेवकूफ समझते हुए कहा—'मौलाना, यह तो ठीक है मगर सवाल यह है कि मलिक साहब आपको यहाँ रहने भी देंगे या नही?'

अर्ज किया—'हुज़ूरेवाला! यही तो इस मजबूरी को खत्म करने की एक तरकीब है कि जब मैं इतनी बड़ी जिम्मेदारी यहाँ ले लूंगा तो वह मजबूर हो जाएँगे और मुझसे दिल्ली रहने की जिद न कर सकेंगे। समझे आप'' मैं यह कैसे गवारा कर सकता हूँ कि अपना और बीवी-बच्चों को बोझ उन पर डालू। इस तरह मैं यहाँ रहने की सम्भावना पैदा कर लूंगा और वह शायद राजी भी हो जायेंगे—मुझे यकीन है।'

अलताफ साहब ने कहा—'समझ गया—अच्छा अब यह बताइये कि होटल का सौदा करने के बाद जनाब का प्रोग्राम क्या है?'

अर्ज किया—'होटल का सौदा तो अभी हुआ जाता है। इसके बाद आप मेरी गैरहाजिरी मे फिलहाल तो जिस तरह हो होटल चलाते रहिए। मैं वापिस आकर फिर ज़रा तरीके से और स्कीम से काम शुरू करूँगा।'

अलताफ ने हैरान होकर कहा—'आपका मतलब यह है कि गोया मुझको यह काम अंजाम देना होगा?'

अर्ज किया—'सिर्फ मेरी गैरहाजिरी में नहीं बल्कि मेरी वापसी के बाद भी।'

एक अजीब अंदाज़ से आँखों में आँखें डालकर बोले—'एक बात बताओ कि तुमको मेरी किस बात से अंदाज़ा हुआ कि मैं इतना चुग़द हूँ कि ख्वामख्वाह का सर दर्द मोल ले लूंगा? शायद जनाब को यह पता नहीं कि मैं सरकारी नौकर भी हूं और सरकारी नौकरी एक अजीब

बवाल हुआ करती है कि आदमी को रोज़ दफ्तर में हाज़िरी भी देनी पड़ती है।'

अर्ज़ किया—'मगर इसके बावजूद होटल की निगरानी हो सकती है। मुझको जनाब की योग्यताओं का उससे ज़्यादा पता है जितना खुद बदौलत को होगा। लिहाज़ा मैंने कुछ समझकर ही फैसला किया है और फैसले में दुरुस्ती की गुंजाइश नहीं।'

अलताफ साहब कुछ और कहने ही वाले थे कि चचा खलील आ टपके और आते ही बड़ी शराफत से बोले—'क्यों भई, चलना है शहाब साहब के पास ?'

अर्ज़ किया—'मैं उनके पास हो आया हूँ और वकील साहब की सलाह से कागज़ात तैयार हो गए हैं और यह रही उसकी नकल। थोड़ी देर बाद हम शहाब साहब और अलताफ साहब के साथ रजिस्ट्रेशन आफ़िस जाएँगे जहाँ लेन-देन पूरा हो जाएगा।'

खलील चचा ने ऐनक निकाल कागज़ात को बड़े गौर से पढ़ा और पढने के बाद बड़े इतमीनान से बोले—'यह तो ठीक है मगर क्या मुझको अपनी रहने की जगह भी छोड़नी पड़ेगी ?'

अलताफ साहब ने कहा—आप खुद ही गौर कीजिए कि अब इस जगह पर आपका क्या हक रह जाता है। दूसरी सबसे बड़ी बात यह कि शहाब ने इस बात पर खास जोर दिया है।'

चचा खलील ने आत्मसमर्पण के अन्दाज में कहा—'अच्छा साहब, ···मैं तैयार हूँ।'

और हम तीनों रवाना हो गए।

जब हम दिल्ली स्टेशन पर पहुँचे तो मलिक साहब स्टेशन पर मौजूद थे—हमने तार द्वारा उनको अपने प्रोग्राम की खबर दे दी थी। गफूर मियाँ भी एक तरफ आँखों मे खुशी की चमक लिए मौजूद थे। और तो और, ज़फर साहब भी बिल्कुल आदमियों की सूरत में नज़र आये; बल्कि उस समय हमने इन लोगों को प्लेटफार्म पर देखकर हाथ लहराया तो सबसे पहले ज़फर मियाँ ही मेरे डिब्बे में आये और प्लेटफार्म पर मेरे उतरते ही इस गर्मजोशी के साथ मिले कि यह वही है या कोई दूसरा

जफर।

मलिक साहब प्यार की मूर्ति बने हुए अपने हाथों को आगे बढ़ाये हमारे करीब आये और गले लगाकर मेरा माथा चूम लिया और काँपती हुई आवाज में कहा—'मुझे यकीन था कि तुम जरूर आओगे···' फिर एकाएक ग़फूर की तरफ देखकर अपना फिकरा पूरा किये बगैर बोले—'लो अपने मियाँ ग़फूर से मिलो।'

मैंने बढ़कर ग़फूर को गले से लगा लिया। इतने में जफर साहब सामान उतरवा चुके थे। हम लोग बातें करते हुए बाहर आये और मलिक साहब की मोटर पर घर रवाना हो गये।

आज मलिक साहब ने अपनी कोठी को इस तरह सजाया था जैसे बरात आने वाली हो। हद तो यह है कि कोठी के रास्तों पर नई और ताजा सुर्खी बिखरी हुई नज़र आ रही थी और कागज की नीली-पीली झंडियाँ भी लगाई थीं और टीनों का एक फाटक बनाकर उस पर लिखा था—'वैलकम'।

मलिक साहब ने इस तरह मुझको मुखातिब होकर कहा—'यह सब गफूर मियाँ ने किया है। कल तक यह हजरत अपनी उम्र के मुताबिक बूढे थे, मगर तुम्हारा तार मिलते ही बच्चों से भी ज्यादा बचपन इनमें पैदा हो गया। सारी रात झंडियाँ बनाई हैं और सारा दिन कोठी सजाने में सर्फ किया है।'

मोटर से उतरकर मैंने फिर वाकई भावावेश में ग़फूर का हाथ पकड़कर उसको सीने से लगा लिया और फिर जफ़र साहब से पूछा—'क्यों भाई मेरे लिए कौन-सा कमरा है?'

जफर ने बड़े शौक से उत्तर दिया—'सारा घर आपके लिए है।'

मलिक साहब ने खुश होकर कहा—'सुन लिया जफर मियाँ का जवाब और महसूस किया कुछ फर्क इनमें! मैं तो इसको भी तुम्हारा चमत्कार ही समझता हूँ कि जफर में ऐसी तबदीली पैदा की है कि मैं तो हैरान हूँ—खुदा इसकी उम्र में बरकत दे, मुझे इससे कोई शिकायत नहीं है···।'

मलिक साहब की जबान से जफर के बारे में बातें सुनकर जो खुशी मुझको हो सकती थी, वह जाहिर है। फिलहाल रस्मी तौर पर खुश

होकर कहा—'जफर मियाँ के बारे में मैं तो एक दिन के लिए भी हताश नहीं हुआ था और मुझे उम्मीद थी कि आप भी एक दिन उनकी तारीफ करेंगे।'

यह कहकर जफर की कमर में हाथ डालते हुए मैंने उनको मुहब्बत से अपनी तरफ खींच लिया—मलिक साहब ने गोया चौंककर कहा—'अरे भई, तो अन्दर क्यों नहीं चलते यानी आपका मतलब यह है कि अब भी बाहर ही ठहरेंगे ? तुम्हारे आने की खबर तो कल हुई है, मगर यह समस्या यहाँ बहुत पहले ही तय हो चुकी है। अब न तुम्हारी चची तुमसे पर्दा करेंगी और न तुम्हारी बहन ग़ज़ाला बल्कि उन दोनों को तो गुस्सा आ रहा होगा कि मैं तुमको बाहर ही क्यों रोके हुए हूँ—आओ अन्दर चलें।'

यह कहकर मलिक साहब ने मेरा हाथ पकड़ा और अन्दर जाने के दरवाज़े पर पहुँचकर आवाज़ लगाई 'भई, हम लोग आ रहे हैं!'

ज़फर मियाँ जानबूझकर बाहर ही रह गये जहाँ बरामदे में ही चचीजान आँखों से प्यार उडेलती हुई मिलीं और उनकी आड़ में ग़ज़ाला भी सिमटी-सिमटाई खड़ी थी। मैंने झुककर चचीजान को सलाम किया। वह एकदम और आगे बढ़कर अगले ज़माने की बड़ी-बूढ़ियों की तरह पीठ पर हाथ फेरकर बोली—'बेटा, जीते रहो, हज़ारों उम्र पाओ!'

मलिक साहब ने खुश होकर कहा—'और वह कहाँ है अपने भैया की चहेती बहन!'

बेगम साहिबा ने ग़ज़ाला की तरफ देखकर कहा—'लो और सुनो, अब तक तो नाक में दम कर रखा था—अब भैया आये हैं तो सिमटी हुई खड़ी है। पगली कहीं की, भाइयों से भी कोई शर्म करता है!'

मैंने फिर ग़ज़ाला से खुद कहा—'खैरियत ही होगी कि तुम सामने आ गई वरना मैं तो तय कर चुका था कि इस मामले में ज़बरदस्ती करनी पड़ेगी।'

मलिक साहब ने फिर कोई भूली बात याद करते हुए कहा—'अरे भई हाँ, वह मैंने कहा, बकलीस का भी खत आ गया है, वह तैयार बैठे हैं। ग़ज़ाला बेटी, अपनी भाभी का वह खत दिखाओ इनको......।'

मैंने कहा—'जी हाँ मुझे मालूम है जो कुछ लिखा होगा उन्होंने मेरे

पास भी ख़त भेजा है जिसमें वह लिख चुकी है कि आपने और ग़ज़ाला ने उनको खरीद लिया है !'

बेग़म साहिबा ने मलिक साहब की ख़बर ली—'ए, मैं कहती हूँ क्या इसको लिये बस इसी तरह खड़े रहोगे ! इक तो वह सफर से थका-हारा आ रहा है, दूसरे उसे बातों में लगाये हो। बेटा, तुम नहा-धोकर आदमियों की सूरत बनाओ तो मैं खाना लगाऊँ—बातें तो होती रहेंगी। मैंने कहा, इसका सामान भी कमरे में रखवा दिया है?'

मलिक साहब ने कहा—'इसकी फ़िक्र न करो—ज़फ़र अब माशा-अल्लाह ज़िम्मेदार आदमी बन चुका है। उसने सब-कुछ ठीक कर दिया। बड़ा खुश है इनके आने से।'

बेग़म साहिबा ने कहा—'खुश न होगा ! जानता है कि इन्हीं की बदौलत वह आदमियों के जामे में आया है।

मलिक साहब ने कहा—'आओ भई मौलाना, तुमको ज़फ़र मियाँ और ग़फ़ूर के हवाले कर दूँ, फिर इतमीनान से बातें होंगी।'

चलते-चलते बेग़म साहिबा ने ममताभरी माँ की तरह कहा—'इतने ही दिनों में सूखकर आधे रह गये।'

□

बीस

सुबह आँख ही इस तरह खुली कि ग़फ़ूर मियाँ बिस्तर की चाय लगा रहा था। लम्बे अरसे के बाद बिस्तर की चाय मिली थी। अभी मैं इस बिस्तर की चाय से निबटा ही था कि जफर मियाँ बड़े शरीफ़ाना अन्दाज से कमरे में दाखिल हुए।

हमने उसको बजाय कुर्सी के बिस्तर पर ही बिठाते हुए कहा—'हाँ भई, अब बताओ क्या रंग-ढंग हैं?'

बजाय जफर के ग़फ़ूर मियाँ ने जवाब दिया—'जफर मियाँ खो गये थे— आप फरिश्ता बनकर आये और उनको ढूंढ़ दिया—यह है रंग-ढंग।'

मैंने मुस्करा कर जफर को देखते हुए कहा—'मतलब यह है कि ठीक है न सब-कुछ, इतमीनान है न?'

जफर ने कहा—'सब-कुछ आपकी बदौलत हुआ है। ग़फ़ूर मियाँ ने बिल्कुल ठीक कहा है, मैं खुद अपने लिए गुम हो गया था और अब खुद अपने को पा गया हूं।'

ग़फ़ूर ने कहा—'आप जो किताब छोड़ गये थे उसने तो काया पलट दी। जादू कर दिया जैसे उस किताब ने। ज़फर मियाँ तो आपको इतना याद करते थे कि क्या बताऊँ!'

मैं न जाने अब क्या कहने वाला था कि मलिक साहब पधारे और मेरी बात खत्म हो गई।

मलिक साहब ने आते ही कहा—'अब तैयार होकर मियाँ अन्दर तशरीफ ले चलिये—चाय अन्दर ही होगी और फिर गप्पें लड़ेंगी। मियाँ-

बहुत-सी बातें करनी हैं, इतने दिनों के बाद मिले हो। तुम्हारी चची और गजाला भी इन्तजार कर रही हैं।'

मैंने बिस्तर से उठते हुए कहा—'बस पन्द्रह मिनट में तैयार होता हूँ, आप चलिए तब तक।'

हम नित्यकर्म से निबट कर निकले तो मलिक साहब अखबार पढ रहे थे। मुझको सिर से पैर तक देखने के बाद बोले—'साहब, तैयार हो गये। अच्छा तो गोया यह नया सूट है—माशाअल्लाह खूब है! अच्छा तो अन्दर चलिये।'

अन्दर बेगम और गजाला हमारी इन्तजार में थे। गजाला इस वक्त सिमटी-सिमटाई हुई न थी बल्कि इस तरह बैठी थी जैसे सचमुच बहनें-भाइयों के सामने बैठती हैं। एक सुन्दर-सी लड़की, जिसकी सुरुचि उसकी वेषभूषा से प्रकट हो रही थी। इस समय मेरे दिल मे सबसे पहले यह विचार आया कि खुदा करे जफर अपने को इस लड़की के लायक बना सके।

हमने चाय की मेज पर बैठते हुए कहा—'मुझे सबसे ज्यादा खुशी जफर को देखकर हुई।'

गजाला ने बात काटकर कहा—'लीजिए, मैं तो खुश थी कि शायद मेरे भैया सबसे ज्यादा खुश मुझे देखकर होंगे।'

मैंने कहा—'तुमको तो बगैर देखे भी बहुत खुश था कि खुदा ने मुझको पली-पलाई एक बहन दे दी है।'

बेगम साहिबा ने कहा—'भाई जान की तो वह ललक है बहन को कि मैं क्या कहूँ? इतने ही दिनों में न जाने कितने स्वैटर बुन चुकी है तुम्हारे लिए। उस रोज हम लोग कपड़ा खरीदने गये तो सूट का एक कपड़ा देखकर मेरे सर हो गई कि यह तो भाईजान के लिए ले लो।'

मैंने कहा—'इसका मुझको अन्दाज है और मैं अपनी बहन के लिए जो तड़प अपने दिल में रखता हूँ, उसके बाद मुझको यह बात सुनकर जरा भी ताज्जुब नहीं हो रहा है। अच्छा तो मेरे लिए स्वैटर बनाये गए हैं। मै भी छाँट-छाँटकर अपनी बहन के लिए तोहफे लाया हूँ।'

गजाला ने कहा—'जी हाँ, क्या मैंने मुकाबला करने के लिए स्वैटर बुने हैं?'

मैंने बाहर से सूटकेस को यहीं मँगवाकर गजाला को घड़ी, टाप्स, डपलस और कपड़े निकालकर उसको देते हुए कहा—'यह तो भाई लाया है एक बहन के लि ।'

बेगम महिबा ने कहा—'यह ज्यादती है । मैंने कहा, देख रहे हो भला यह भी कोई बात है !'

मैंने गर्म सूट का कपड़ा निकालकर बेगम साहिबा को देते हुए कहा — 'यह अपनी चचीजान के लिए ।'

मलिक साहब नेकहा—'भई लाजवाब कपड़ा है, क्या कहना है— क्या रंग हैं और क्या शान—मगर साहब, यह है वाकई ज्यादती ।'

हमने एक बंडल निकालकर कहा—'और यह है आपकी शेरवानी का ककनैा ।'

मलिक साहब ने वाकई खुश होकर कहा—'सुभान अल्लाह ! शायर लगूँगा शेरवानी में ।'

एक गर्म कपड़ा कोट का गफूर को देते हुए मैंने कहा—'गफूर मियाँ, यह आपके ओवरकोट का कपड़ा है और इसकी सिलाई मेरे ज़िम्मे होगी । और ज़रा ज़फर मियाँ को भी बुला दीजिए !'

यह सुनते ही गजाला चौकड़ी भरती हुई चली गई और जब ज़फर मियाँ आ गए तो मैंने एक लिफाफा निकालकर देते हुए कहा—'ज़फर, तुम मेरे छोटे भाई हो और मैं तुम्हारे लिए जो तोफा लाया हूँ मुझे उम्मीद है तुम क़बूल करोगे ।'

मलिक साहब ने ज़फर के हाथ से लिफाफा लेकर कागज़ निकालकर पढा । यह कागज़ होटल के लेन-देन का था । शुरू से आखिर तक इसको पढकर अचरज से मुझको देखकर बोले, 'मैं समझा नहीं यह क्या है ?'

मैंने विस्तारपूर्वक होटल की सारी कहानी और ज़फर के लिए होटल खरीदने की और अन्य सब बातें बताईं ।

मलिक साहब ने कहा—'भई, यह तो सब ठीक है । और जो कुछ तुम कह रहे हो मैं समझ गया हूँ । मगर यह होगा कैसे?'

मैंने कहा—'सब हो जायेगा । मैं आपको इस सिलसिले की सारी बातें समझाऊँगा । फिलहाल तो ज़फर साहब मेरी तरफ से यह कबूल करें ।'

मलिक साहब ने कहा—'खैर, आप तो हैं पागल । यह कागज़ मुझको दीजिए । मैं इसको कबूल करता हूँ मगर अब परमिट ऑफिस चलें, सबसे पहला काम यही है ।'

और हम लोग परमिट ऑफिस को रवाना हो गए । □

इक्कीस

आखिर हमको अपनी बीवी और बच्चे को लेने के लिए जाना ही पड़ा और हम बकलीस और मुन्ने फिरदौस को ले ही आए।

कुछ न पूछिये, बकलीस उन लोगों से मिलकर किस क़दर खुश थी। दो-चार ही दिन में यह हाल हो गया गोया वाकई इस घर की चहेती बहू है। और तो और, फिरदौस से मलिक साहब की दोस्ती कुछ इस किस्म की हो गई कि बगैर दादा के उसको चैन ही न था।

अतएव इस वक्त भी जब मैं कमरे में दाखिल हुआ तो क्या देखता हूँ कि बड़े मियाँ घोड़ा बने हुए हैं और फिरदौस साहब उनकी पीठ पर बैठे हुए सारे फर्श पर उनको घुटनों और हाथों के बल चलाते फिर रहे हैं।

मैंने यह नज़ारा देखकर कहा—'बेटा, क्या दादा मियाँ के साथ यह सलूक हो रहा है?'

फिरदौस ने कहा—'डैडी···दादा घोड़ा हमारा—दादा घोड़ा।'

बकलीस ने कहा—'रात का क़िस्सा आपने नहीं सुना। कोई दो बजे होंगे कि आप उठकर बैठ गये और हुक्म दिया कि फूफू के पास जायेंगे।'

मैंने कहा—'फूफू से क्या मतलब?'

बकलीस ने बतलाया कि गज़ाला को 'फूफू' कहलवाने की कोशिश की गई थी। अब गज़ाला और मलिक साहब को इसने काफी दोस्त बना लिया है। बल्कि अब तो मलिक साहब को इतने ही दिनों में यकीन हो गया कि लड़का मेरे और गज़ाला के पास बड़े आराम से रह सकता है। और क्यों न रहता! गज़ाला ने दो-चार दिन में ही सारा घर खिलौनों

से भर दिया था। कुछ खिलौने तो पहले से मँगवाकर रख छोड़े थे और बाकी फिरदौस को देखकर और उससे दोस्ती पैदा करके मंगवाये थे और अब अच्छी-खासी खिलौनों की दूकान थी।

दिल्ली आने पर कुछ दिन तक तो कोई निर्णयात्मक ठोस बात ही न हो सकी, मगर आखिर कब तक न होती। एक दिन मैंने बकलीस से कहा कि चचीजान और मलिक साहब को पकड़ लाओ। मैं जफर को बुलाये लेता हूँ ताकि कुछ प्रोग्राम तो बन जाये।

जब इस कांफ्रेंस की हाज़िरी पूरी हो गई तो मैंने यह सवाल उठाया कि अब छुट्टी खत्म हो रही है। फिलहाल मैं यह चाहता हूँ कि मैं सिर्फ जफर मियाँ को लेकर लखनऊ जाऊं और होटल का इन्तजाम आदि उनके हाथ में सौंप दूँ।

मलिक साहब ने सोचने-विचारने के बाद कहा—'ज़फर बेशक आपके साथ जायेगा और होटल का इन्तजाम भी सम्हालेगा बल्कि हम सब चलेंगे आपके साथ। और वहाँ जाने का मतलब यह होगा कि बजाय इसके कि मैं यहाँ एक और कोठी बनवाऊँ, क्यों न वह लखनऊ में बनवायी जाये। जगह वगैरह देखकर गज़ाला के लिए एक घर वहाँ भी क्यों न बनवा लिया जाये?'

फिर ज़रा रुककर बोले—'खैर, ये सब बातें बाद की हैं। फिलहाल तो ज़फर मियाँ, आप ज़रा बाहर तशरीफ ले जाइये, मुझे इनसे कुछ सलाह करनी है।'

ज़फर मियाँ के जाने के बाद मलिक साहब ने कहा—'भई सबसे पहली बात तो यह है कि जाने से पहले अपनी बहन का निकाह पढाते जाओ। पूरी तैयारी है—कल या परसों जिस दिन चाहो यह काम कर दो।'

बकलीस ने कहा—'इतनी जल्दी?? आखिर किसी को तो बुलाना ही होगा।'

चचीजान ने कहा—'मुझे जिसको बुलाना था वह आ गई है। एक-आध रिश्तेदार और हैं, वह जिस वक्त बुलाये जायें आ सकते हैं। ज़फर की भी यही इच्छा है कि ख्वामख्वाह की बातों में रुपया बर्बाद न किया

जाये। दहेज की एक-एक चीज तैयार है—अगर आज तय करो तो मैं आज कर सकती हूँ निकाह।

मैंने कहा—'बस तो ठीक है! अल्लाह का नाम लेकर कर दीजिए कल ही निकाह।'

मलिक साहब ने कहा—'और निकाह के बाद दुल्हा-दुल्हन को लेकर हम लोग लखनऊ चलेंगे। मुझे अब जफर की तरफ से पूरा इतमीनान है और अब वह वाकई अगर सम्हलता है तो इन्शाअल्ला सम्हलता ही रहेगा।'

चचीजान ने कहा—'यह सब तो ठीक है···तो फिर परसों करो न, जुम्मा है।'

मैंने कहा 'चलिए परसों ही सही।'

× × ×

निकाह और विदा सब-कुछ उस दिन हो गया और दूसरे दिन मुझसे मलिक साहब ने अलताफ को तार दिलवाया कि किसी अच्छे होटल मे दो सूट बुक कराए जाएँ।

और इस तार के बाद अब सफ़र की तैयारियाँ हो रही थी। और बीच में मुझको यह नोटिस मिल चुका था कि इस सफ़र से मेरा कोई मतलब नहीं है। सारे काफिले के जिम्मेदार खुद मलिक साहब होंगे।

लखनऊ कूच से एक दिन पहले जफर मियाँ मुझको कमरे में अकेला देखकर चुपके से आ गये और एकदम मेरे पाँव पकड़ लिये।

मैं हैरान कि माजरा क्या है?

आखिर बहुत कुछ पूछने के बाद पता सिर्फ़ यह चला कि यह सिर्फ अहसानमंदी के आँसू हैं और वह कह रहे थे—'आपने मुझको खाक से पाक कर दिया, आपने मुझको ख़रीद लिया।'

और मैंने उन हज़रत के एक चपत रसीद करते हुए कहा—'एक तो साला बनाया मुझको—ऊपर से बेवकूफ बना रहे हो, अलबत्ता अगर मेरी बहन के आदर और कद्रदानी में फर्क किया तो दोनों कानों के बीच मे सर कर दूंगा।'

□